॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

अथर्ववेदीय

श्रीरामपूर्वतापनीयोपनिषद्

शान्तिपाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥
ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

[इन मन्त्रोंका अर्थ प्रश्नोपनिषद्में दिया जा चुका है।]

प्रथम खण्ड

राम-नामके विविध अर्थ; भगवान्‌के साकार तत्त्वकी व्याख्या; मन्त्र एवं यन्त्रका माहात्म्य

ॐ सच्चिदानन्दमय महाविष्णु श्रीहरि जब रघुकुलमें दशरथजीके यहाँ अवतीर्ण हुए, उस समय उनका नाम 'राम' हुआ। इस नामकी व्युत्पत्ति इस प्रकार है—'जो महीतलपर स्थित होकर भक्तजनोंका सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करते और राजाके रूपमें सुशोभित होते हैं, वे राम हैं'—ऐसा विद्वानोंने लोकमें 'राम' शब्दका अर्थ व्यक्त किया है। (**'राति राजते वा महीस्थितः सन् इति रामः**'—इस विग्रहके अनुसार '**राति**' या '**राजते**' का प्रथम अक्षर 'रा' और '**महीस्थितः**' का आदि अक्षर 'म' लेकर 'राम' बनता है; इसी प्रकार अन्यत्र भी समझना चाहिये।) राक्षस जिनके द्वारा मरणको प्राप्त होते हैं, वे राम हैं। अथवा अपने ही उत्कर्षसे इस भूतलपर उनका 'राम' नाम विख्यात हो गया (उसकी प्रसिद्धिमें कोई व्युत्पत्तिजनित अर्थ ही कारण है, ऐसा नहीं मानना चाहिये)। अथवा वे अभिराम (सबके मनको रमानेवाले) होनेसे राम हैं। अथवा जैसे राहु मनसिज (चन्द्रमा)-को हतप्रभ कर देता है, उसी प्रकार जो राक्षसोंको मनुष्यरूपसे प्रभाहीन (निष्प्रभ) कर देते हैं, वे राम हैं। अथवा वे राज्य पानेके अधिकारी महीपालोंको अपने आदर्श चरित्रके द्वारा धर्ममार्गका उपदेश देते हैं, नामोच्चारण करनेपर ज्ञानमार्गकी प्राप्ति कराते हैं, ध्यान करनेपर वैराग्य देते हैं और अपने विग्रहकी पूजा करनेपर ऐश्वर्य प्रदान करते हैं; इसलिये इस भूतलपर उनका 'राम' नाम पड़ा होगा। परंतु यथार्थ बात तो यह है कि उस अनन्त, नित्यानन्दस्वरूप, चिन्मय ब्रह्ममें योगीजन रमण करते हैं; इसलिये वह परब्रह्म परमात्मा ही 'राम' पदके द्वारा प्रतिपादित होता है ॥ १—६ ॥

यद्यपि ब्रह्म चिन्मय, अद्वितीय, प्राकृत अवयवरहित और (पाञ्चभौतिक) शरीरसे रहित है, तथापि भक्तजनोंके अभीष्ट कार्यकी सिद्धिके लिये वह चिन्मय देहको प्रकट करता है—भक्तोंके स्नेहवश निराकार ब्रह्म भी नराकार धारण कर लेता है ॥ ७ ॥

भगवान्‌के स्वरूपमें स्थित जो देवता हैं, उन्हींकी पुरुष, स्त्री, अङ्ग और अस्त्र आदिके रूपमें कल्पना होती है अर्थात् भिन्न-भिन्न देवता ही अस्त्र आदिके रूपमें भगवान्‌की सेवा करते हैं, परंतु वे भगवत्स्वरूपसे पृथक् नहीं हैं। भगवान् जो अनेक प्रकारके स्वरूप धारण करते हैं, उनमें किसीके दो, किसीके चार, किसीके छः, आठ, दस, बारह, सोलह और अठारह—इतने-इतने हाथ कहे गये हैं। ये शङ्ख आदिसे सुशोभित होते हैं। 'विश्वरूप' धारण करनेपर भगवान्‌के सहस्रों हाथ हो जाते हैं। उन सभी विग्रहोंके भिन्न-भिन्न रंग और वाहन आदिकी भी

कल्पना होती है। उनके लिये नाना प्रकारकी शक्तियों तथा सेना आदिकी भी कल्पना की जाती है। इस प्रकार परब्रह्म परमात्मामें विष्णु, शिव, दुर्गा, सूर्य और गणेश आदिके रूपमें पञ्चविध शरीरकी कल्पना होती है और उन सबके लिये पृथक्-पृथक् सेना आदिकी कल्पना होती है॥ ८—१०॥

ब्रह्मासे लेकर वृक्षादिपर्यन्त समस्त जड-चेतनका वाचक जो यह 'राम' मन्त्र है, यह अर्थके अनुरूप ही है—जैसा इस नामका अर्थ है, वैसा ही इसका प्रभाव भी है। अतः इस राम-मन्त्रकी दीक्षा लेकर सदा इसका जप करना चाहिये। इसके बिना भगवान्‌की प्रसन्नता नहीं प्राप्त होती। क्रिया, कर्म इत्यादिका अनुष्ठान करनेवाले जो साधक हैं, उनके अर्थ (अभीष्ट प्रयोजन)-को मन्त्र बता देता है—उसकी सिद्धिका निश्चय करा देता है; अतः मनन (निश्चय) और त्राणन (रक्षा) करनेके कारण वह मन्त्र कहलाता है। वह सम्पूर्ण अभिधेयोंका वाचक होता है। स्त्री-पुरुष उभयरूपमें विराजमान जो भगवान् हैं, उनके लिये प्रतीकरूप विग्रह-यन्त्रका निर्माण है। यदि बिना यन्त्रके पूजा होती है तो देवता प्रसन्न नहीं होते॥ ११—१३॥

द्वितीय खण्ड

श्रीरामके स्वरूपका कथन; राम-बीजकी व्याख्या

भगवान् किसी कारणकी अपेक्षा न रखकर स्वतः प्रकट होते या नित्य विद्यमान रहते हैं, इसलिये 'स्वभू' कहलाते हैं। चिन्मय प्रकाश ही उनका स्वरूप है; अतः वे ज्योतिर्मय हैं। रूपवान् होते हुए भी वे अनन्त हैं—देश, काल और वस्तुकी सीमासे परे हैं। उन्हें प्रकाशित करनेवाली कोई दूसरी शक्ति नहीं है, वे अपनेसे ही प्रकाशित होते हैं। वे ही अपनी चैतन्यशक्तिसे सबके भीतर जीवरूपसे प्रतिष्ठित होते हैं तथा वे ही रजोगुण, सत्त्वगुण तथा तमोगुणका आश्रय लेकर समस्त जगत्‌की उत्पत्ति, रक्षा और संहारके कारण बनते हैं; ऐसा होनेसे ही यह जगत् सदा प्रतीतिगोचर होता है। यह जो कुछ दिखायी देता है, सब ॐकार है—परमात्मस्वरूप है। जैसे प्राकृत वटका महान् वृक्ष वटके छोटे-से बीजमें स्थित रहता है, उसी प्रकार यह चराचर जगत् रामबीजमें स्थित है। ('राम्' ही रामबीज है।) ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव—ये तीन मूर्तियाँ 'राम्' के रकारपर आरूढ हैं तथा उत्पत्ति, पालन एवं संहारकी त्रिविध शक्तियाँ अथवा बिन्दु, नाद और बीजसे प्रकट होनेवाली रौद्री, ज्येष्ठा एवं वामा—ये त्रिविध शक्तियाँ भी वहीं स्थित हैं। ('राम्' का अक्षर-विभाग इस प्रकार है—र्, आ, अ, म्। इनमें रकार तो साक्षात् श्रीरामका वाचक है तथा उसपर आरूढ़ जो 'आ', 'अ' और 'म्' हैं, ये क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव—इन तीन देवोंके और उपर्युक्त त्रिविध शक्तियोंके वाचक हैं।) इस बीज-मन्त्रमें प्रकृति-पुरुषरूप सीता तथा राम पूजनीय हैं। इन्हीं दोनोंसे चौदह भुवनोंकी उत्पत्ति हुई है। इनमें ही इन लोकोंकी स्थिति है तथा उन आकार, अकार, मकाररूप ब्रह्मा, विष्णु, शिवमें इन सबका लय भी होता है। अतः श्रीरामने माया (लीला)-से ही अपनेको मानव माना। जगत्‌के प्राण एवं आत्मारूप इन भगवान् श्रीरामको नमस्कार है। इस प्रकार नमस्कार करके गुणोंके भी पूर्ववर्ती परब्रह्मस्वरूप इन नमस्कारयोग्य देवता श्रीरामके साथ अपनी एकताका उच्चारण करे अर्थात् दृढ भावनापूर्वक 'मैं श्रीराम ही ब्रह्म हूँ' यों कहे॥ १—४॥

तृतीय खण्ड

राम-मन्त्रकी व्याख्या; जपकी प्रक्रिया तथा ध्यान

'नमः' यह नाम जीववाचक है और 'राम' इस पदके द्वारा आत्माका प्रतिपादन होता है तथा 'राम' के साथ एकात्मताको प्राप्त हुई जो 'आय' (रामाय)-रूपा चतुर्थी विभक्ति है, उसके द्वारा जीव और आत्मा (परमात्मा)-की एकता बतलायी जाती है। '**रामाय नमः**' यह मन्त्र वाचक है और भगवान् राम इसके वाच्य हैं; इन दोनोंका संयोग (अर्थात् मन्त्रजपपूर्वक भगवान्‌के स्वरूपका चिन्तन) सम्पूर्ण साधकोंको अभीष्ट फल प्रदान करनेवाला है। इसमें तनिक भी संशय नहीं है। जैसे जो नामी होता है, वह अपने वाचक नामका

उच्चारण होनेपर सम्मुख आ जाता है, उसी प्रकार बीजात्मक मन्त्र 'राम्'- को भी समझना चाहिये अर्थात् इसके द्वारा बुलानेपर भी भगवान् मन्त्र-जप करनेवाले साधकके सम्मुख आ जाते हैं। बीज और शक्तिका क्रमशः दाहिने और बायें स्तनोंपर न्यास करे और कीलकका नियमपूर्वक मध्यमें अर्थात् हृदयमें न्यास करे। (यहाँ 'रां' यह बीज है, 'मां' यह शक्ति है और 'यं' यह कीलक है।) इस न्यासके साथ ही साधक अपनी मनोवाञ्छासिद्धिके लिये विनियोग भी करे। सभी मन्त्रोंका यही साधारण क्रम है—अर्थात् पहले बीजका, फिर शक्तिका, फिर कीलकका न्यास तथा अन्तमें अपनी मनोरथसिद्धिके लिये विनियोग होता है। यहाँ ध्यानकालमें भावना करनी चाहिये कि दशरथनन्दन भगवान् श्रीराम अनन्त परमात्मारूप हैं। वे तेजमें प्रज्वलित अग्निके सदृश हैं। (अथवा राम्-मन्त्र अनन्त—'आ' और तेजोमय अग्नि 'र्' के साथ एक ही समय उच्चारित होता है। 'र्' और 'आ' का एक साथ उच्चारण होनेसे 'रा' बनता है।) वे श्रीराम जब शीतल किरणोंवाली अर्थात् सौम्य कान्तिमती श्रीसीताजीके साथ संयुक्त होते हैं, तब उनसे अग्नीषोमात्मक (पुरुष और स्त्रीरूप) जगत्की उत्पत्ति होती है। (अथवा अनुष्णगु-शब्दका अर्थ है चन्द्रमा (म्) और विश्वका अर्थ है वैश्वानर—अग्नि (रा); अतः वैश्वानर-बीज 'रा' जब चन्द्र-बीज 'म्' से व्याप्त होता है, तब अग्नीषोमात्मक जगत्का वाचक 'राम्' यह मन्त्र बनता है।) श्रीराम सीताके साथ उसी प्रकार शोभा पाते हैं, जैसे चन्द्रमा चन्द्रिकाके साथ सुशोभित होते हैं॥ १—६॥

ध्यान

कौसल्यानन्दन श्रीराम अपनी प्रकृति—ह्लादिनीशक्ति श्रीसीताजीके साथ विराजमान हैं। उनका वर्ण श्याम है। वे पीताम्बर धारण किये हुए हैं। उनके सिरपर जटाभार सुशोभित है। उनके दो भुजाएँ हैं। कानोंमें कुण्डल शोभा पा रहे हैं। गलेमें रत्नोंकी माला चमक रही है। वे स्वभावतः धीर (निर्भय एवं गम्भीर) हैं। धनुष धारण किये हुए हैं। उनके मुखपर सदा प्रसन्नता छायी रहती है। वे संग्राममें सदा ही विजयी होते हैं। अणिमा आदि आठ ऐश्वर्यशक्तियाँ उनकी शोभा बढ़ाती हैं। इस जगत्की कारणभूता मूल प्रकृतिरूपा परमेश्वरी सीता उनके वाम अङ्कको विभूषित कर रही हैं। सीताजीके श्री-अङ्गोंकी कान्ति सुवर्णके सदृश गौर है। उनके भी दो भुजाएँ हैं। वे समस्त दिव्य आभूषणोंसे विभूषित हैं तथा हाथमें कमल धारण किये हुए हैं। उन चिदानन्दमयी सीतासे सटकर बैठे हुए भगवान् श्रीराम बड़े हृष्ट-पुष्ट दिखायी देते हैं। दक्षिण भागमें श्रीरघुनाथजीके छोटे भाई सुवर्ण-गौर कान्तिवाले श्रीलक्ष्मणजी हाथमें धनुष-बाण लिये खड़े हैं। उस समय श्रीराम, लक्ष्मण और श्रीसीताजीका एक त्रिकोण बन जाता है॥ ७—९॥

चतुर्थ खण्ड

षडक्षर-मन्त्रका स्वरूप; भगवान् श्रीरामका स्तवन

जैसे श्रीराम-मन्त्रका 'राम्' यह बीज बताया गया है, उसी प्रकार उसका शेष अंश भी बताया जाता है। स्व अर्थात् 'राम' शब्दके चतुर्थ्यन्त रूपके साथ जीव—अर्थात् 'नमः' पद हो तो '**रां रामाय नमः**' यह षडक्षर-मन्त्र बनता है। इस प्रकार षडक्षर-मन्त्र सिद्ध होनेपर दो त्रिकोणरूप बनता है। (अर्थात् छहों अक्षरोंके न्यासके लिये छः कोण बनते हैं।) एक बार जब देवता भगवान्का दर्शन करनेके लिये आये, तब उन्होंने कल्पवृक्षके नीचे रत्नमय सिंहासनपर विराजमान जगदीश्वर श्रीरघुनाथजीका इस प्रकार स्तवन किया—"कामरूपधारी तथा मायामय स्वरूप ग्रहण करनेवाले श्रीरामको नमस्कार है। (अथवा कामबीज 'क्लीं' और मायामय बीज 'ह्रीं' से युक्त श्रीराम-मन्त्रको नमस्कार है—**क्लीं रामाय नमः ह्रीं रामाय नमः**।) वेदके आदिकारण ॐकारस्वरूप श्रीरामको नमस्कार है। (इससे '**ॐ रामाय नमः**' इस मन्त्रकी सूचना मिलती है।)" रमा श्रीसीताजीको धारण करनेवाले अथवा रमणीय अधरोंवाले, आत्मरूप, नयनाभिराम श्रीरामको नमस्कार है। श्रीजानकीजीका शरीर ही जिनका आभूषण अथवा जो श्रीजनकनन्दिनीके श्रीविग्रहको स्वयं ही शृङ्गार आदिसे विभूषित करते हैं, जो राक्षसोंके संहारक तथा कल्याणमय विग्रहवाले हैं तथा जो दशमुख रावणका अन्त करनेके लिये यमराजस्वरूप हैं, उन मङ्गलमय रघुवीरको नमस्कार है। हे रामभद्र!

हे महाधनुर्धर! हे रघुवीर! हे नृपश्रेष्ठ! हे दशवदन-विनाशक! हमारी रक्षा कीजिये तथा हमें ऐसी श्री—ऐश्वर्य-सम्पदा दीजिये, जिसका सम्बन्ध आपसे हो अर्थात् जो भगवत्प्रीत्यर्थ ही उपयोगमें लायी जा सके*॥ १—६॥

पञ्चम खण्ड

खरके वधसे लेकर वाली-वधतकका संक्षिप्त चरित्र

'रघुवीर! आप हमें ऐश्वर्यकी प्राप्ति कराइये।' भगवान् श्रीरामने जबतक खर नामक राक्षसका वध किया, उतने समयतक देवता आदि उपर्युक्त रूपसे उनकी स्तुति करके उनके साथ सुखपूर्वक स्थित हुए। देवताओंकी ही भाँति ऋषि भी भगवान्‌की स्तुति करते रहे। उस समय खर आदिके मारे जानेपर राक्षसकुलोत्पन्न रावण (मारीचके साथ) वनमें आया और उसने अपने ही विनाशके लिये रामपत्नी सीताजीको हर लिया। उन दिनों सीता भी वनमें ही रहती थीं। उसने 'वन' से उनको हरण किया, इससे वह राक्षस रावण कहलाया ('राम' शब्दसे 'रा' एवं 'वन' शब्दसे 'वन' लेकर 'रावण' नाम बना) अथवा दूसरोंको रुलानेके कारण वह रावण कहलाता था। (अथवा एक दिन दशाननने कैलासको उठा लिया था, तब महादेवजीने कैलासपर बहुत भार डाल दिया। उस समय) दशाननने बड़ा रव किया, इसीसे उसका नाम रावण हो गया। तदनन्तर श्रीराम और लक्ष्मण सीतादेवीका पता लगानेके व्याजसे वनभूमिपर विचरने लगे। सामने कबन्ध नामक असुरको उपस्थित देख दोनों भाइयोंने उसे मार डाला और उस कबन्धके कथनानुसार वे दोनों शबरीके आश्रमपर गये। वहाँ शबरीने उनका बड़ी भक्तिसे स्वागत-सत्कार किया। तत्पश्चात् आगे जानेपर उन्हें वायुपुत्र भक्तवर हनुमान्‌जी मिले, जिन्होंने (मध्यस्थरूपमें) कपिराज सुग्रीवको बुलाकर उनके साथ दोनों भाइयोंकी मैत्री करायी। तत्पश्चात् दोनों भाइयोंने सुग्रीवसे अपना सब हाल आदिसे अन्ततक कह सुनाया॥ १—५॥

सुग्रीवको श्रीरामके पराक्रममें संदेह था, अतः उन्होंने श्रीरामको दुन्दुभिनामक राक्षसका विशाल शरीर दिखाया (जिसे वालीने मार गिराया था); श्रीरामने दुन्दुभिके उस शवको अनायास ही बहुत दूर फेंक दिया। इसके सिवा एक ही बाणसे सात तालवृक्षोंको तत्काल बींध डाला और इस प्रकार अपने मित्रको आश्वासन देकर प्रसन्नताका अनुभव किया। इससे कपिराज सुग्रीवको बड़ा हर्ष हुआ। इसके बाद वे श्रीरघुनाथजी सुग्रीवके नगरमें गये। वहाँ वालीके भाई सुग्रीवने बड़ी विकट गर्जना की। उस गर्जनाको सुनकर वाली बड़े वेगसे घरके बाहर निकला। श्रीरामने युद्धमें उस वालीको मार गिराया और किष्किन्धाके राज्यसिंहासनपर सुग्रीवको बिठा दिया॥ ६—९॥

षष्ठ खण्ड

शेष चरित्रका संक्षिप्त वर्णन; आवरण-पूजाके लिये यन्त्रस्थ देवताओंका निरूपण

तदनन्तर सुग्रीवने वानरोंको बुलाकर कहा—'वानर-वीरो! तुम सब दिशाओंकी बातें जानते हो। इस समय शीघ्र यहाँसे जाओ और मिथिलेशकुमारी सीताको आज ही ढूँढ़ लाकर रघुनाथजीको अर्पित करो।' (इस आदेशके अनुसार सब दिशाओंकी ओर बहुत-से वानर चल पड़े।) तत्पश्चात् हनुमान्‌जी (जो कुछ प्रमुख वानरोंके साथ दक्षिण दिशामें खोज करनेके लिये भेजे गये थे) समुद्र लाँघकर लङ्कामें गये। वहाँ सीताजीका दर्शन करके उन्होंने अनेक असुरोंका वध किया और लङ्कामें आग लगा दी। फिर वहाँसे श्रीरामके पास लौटकर सब समाचार यथावत् कह सुनाया। तब भगवान् श्रीरामने क्रोधका अभिनय किया—रावणके प्रति क्रोधयुक्त होकर उन वानरोंको बुलाया और उनके साथ अस्त्र-शस्त्र लेकर लङ्कापुरीपर आक्रमण किया। लङ्काका भलीभाँति निरीक्षण करके भगवान्‌ने वहाँके राजा रावणके साथ युद्ध छेड़ दिया।

* कामरूपाय रामाय नमो मायामयाय च॥
नमो वेदादिरूपाय ॐकाराय नमो नमः। रमाधाराय रामाय श्रीरामायात्ममूर्तये॥

उस युद्धमें भाई कुम्भकर्ण तथा पुत्र इन्द्रजित्‌के सहित रावणको मारकर उन्होंने विभीषणको वहाँका राजा बनाया और जनकनन्दिनी सीताको साथ ले उन्हें अपने वाम अङ्कमें बिठाकर उन सब वानरोंके साथ अपनी पुरी अयोध्याको प्रस्थान किया॥ १—६॥

अब द्विभुजरूपधारी श्रीरघुनाथजी अयोध्याके राजसिंहासनपर विराजमान हैं। वे धनुष धारण किये हुए हैं। उनका चित्त स्वभावतः प्रसन्न है। वे सब प्रकारके आभूषणोंसे विभूषित हैं। दाहिने हाथमें ज्ञानमयी[१] और बायें हाथमें तेजको प्रकाशित करनेवाली धनुर्मयी[२] मुद्रा धारण करके वे सच्चिदानन्दमय परमेश्वर व्याख्यानकी[३] मुद्रामें स्थित हैं॥ ७-८॥

(इस प्रकार देवताओंकी स्तुतिसे लेकर श्रीरामके राज्याभिषेकतककी लीलाका संक्षेपसे वर्णन करके अब पुनः पूर्वोक्त षट्कोणका अनुसरण करके आवरण-पूजाके लिये यन्त्रस्थ देवताओंका वर्णन किया जाता है।)

श्रीरामचन्द्रजीके उत्तर और दक्षिणभागमें क्रमशः शत्रुघ्न और भरतजी स्थित हैं। हनूमान्‌जी श्रोताके रूपमें भगवान्‌के सम्मुख हाथ जोड़कर खड़े हैं। वे भी त्रिकोणके भीतर ही स्थित हैं। भरतके नीचे सुग्रीव हैं और शत्रुघ्नके नीचे विभीषण खड़े हैं। भगवान्‌के पीछेकी ओर छत्र-चँवर धारण किये लक्ष्मणजी विराजमान हैं।[४] लक्ष्मणजीसे नीचे स्तरमें ताड़के पंखे हाथमें लिये हुए दोनों भाई भरत-शत्रुघ्न खड़े हैं। इस प्रकार लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्नको लेकर दूसरा त्रिकोण और बन जाता है। इस तरह छः कोण होते हैं। भगवान् श्रीराम पहले तो अपने बीज-मन्त्र-स्वरूप दीर्घ अक्षरोंके ही आवरणसे घिरे हुए हैं। (वह प्रथम आवरण इस प्रकार है—'**रां**', '**रीं**', '**रूं**', '**रैं**', '**रौं**', '**रः**')॥ ९—११॥

द्वितीय आवरण यों है—वासुदेव, शान्ति, संकर्षण, श्री, प्रद्युम्न, सरस्वती, अनिरुद्ध और रति। ये क्रमशः भगवान्‌के आग्नेय आदि दिशाओंमें स्थित हैं। द्वितीय आवरणमें भगवान् इन सबसे संयुक्त रहते हैं। तृतीय आवरणमें हनुमान्, सुग्रीव, भरत, विभीषण, लक्ष्मण, अङ्गद तथा जाम्बवान् और शत्रुघ्नकी गणना है अर्थात् इन सबसे जब श्रीरघुनाथजी संयुक्त होते हैं, तब तृतीय आवरण सिद्ध होता है। इनके अतिरिक्त धृष्टि, जयन्त, विजय, सुराष्ट्र, राष्ट्रवर्धन, अकोप, धर्मपाल और सुमन्त्रसे आवृत होनेपर भी तृतीय आवरण ही रहता

जानकीदेहभूषाय रक्षोघ्नाय शुभाङ्गिने । भद्राय रघुवीराय दशास्यान्तकरूपिणे॥
रामभद्र महेष्वास रघुवीर नृपोत्तम । भो दशास्यान्तकास्माकं रक्षां देहि श्रियं च ते॥ (२—५)

१. ज्ञान-मुद्राका लक्षण इस प्रकार है—

तर्जन्यङ्गुष्ठकौ सक्तावग्रतो हृदि विन्यसेत् ।
वामं हस्ताम्बुजं वामे जानु मूर्धनि विन्यसेत् । ज्ञानमुद्रा भवेदेषा रामचन्द्रस्य वल्लभा॥

दाहिने हाथकी तर्जनी और अँगूठेको सटाकर आगेकी ओर छातीपर रखे और बायें हाथको बायें घुटनेके ऊपर रखे। यह ज्ञानमुद्रा है, जो श्रीरामचन्द्रजीको बहुत प्रिय है।

२. धनुर्मयी मुद्रा इस प्रकार है—

वामस्य मध्यमाग्रं तु तर्जन्यग्रे नियोजयेत् ।
अनामिकां कनिष्ठां च तस्याङ्गुष्ठेन पीडयेत् । दर्शयेद् वामके स्कन्धे धनुर्मुद्रेयमीरिता॥

बायें हाथकी मध्यमा अङ्गुलिके अग्रभागको तर्जनीके अग्रभागमें सटा दे और अनामिका तथा कनिष्ठिकाको अँगूठेसे दबाये। इस प्रकारकी भङ्गी बायें कन्धेपर प्रदर्शित करे। यही धनुर्मुद्रा बतायी गयी है।

३. व्याख्यानमुद्राका लक्षण यों है—

दक्षिणाङ्गुष्ठतर्जन्यावग्रलग्ने पराङ्गुलीः । प्रसार्य संहतोत्ताना एषा व्याख्यानमुद्रिका॥
रामस्य च सरस्वत्या अत्यन्तं प्रेयसी मता । ज्ञानव्याख्या पुस्तकानां युगपत्सम्भवः स्मृतः॥

दाहिने हाथके अँगूठे और तर्जनी अङ्गुलिके अग्रभाग परस्पर सटे हों और शेष तीन अङ्गुलियोंको फैलाकर रखा जाय। वे फैली अङ्गुलियाँ भी परस्पर सटी हुई और उत्तान हों। यह व्याख्यान-मुद्रा है। यह श्रीरामको और सरस्वतीको बहुत अधिक प्रिय है। इसके द्वारा ज्ञान, व्याख्यान तथा पुस्तक—तीनों मुद्राओंका एक साथ प्रकाशन माना गया है।

४. पहले लक्ष्मणको भगवान्‌के दक्षिण भागमें स्थित बता आये हैं और यहाँ पश्चिमभागमें उनकी स्थिति बतायी जाती है; परंतु इसमें विरोध नहीं है। वहाँ वनवासके समयका ध्यान है; अतः उसमें भरत आदिकी उपस्थिति नहीं है। यहाँ राज्याभिषेकके समय भरतजी भी हैं; अतः उस समय लक्ष्मणजीका पृष्ठभागमें स्थित होना उचित ही है।

है। इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, चन्द्रमा, ईशान, ब्रह्मा और अनन्त—इन दस दिक्पालोंसे जब भगवान् आवृत होते हैं, तब चतुर्थ आवरण होता है। (इनमें इन्द्र पूर्वके, अग्नि अग्निकोणके, यम दक्षिणके, निर्ऋति नैर्ऋत्यकोणके, वरुण पश्चिमके, वायु वायव्यकोणके, चन्द्रमा उत्तरके और ईशान—शिव ईशानकोणके अधिपति हैं। इन सबकी अपनी-अपनी दिशामें पूजा करनी चाहिये। ब्रह्माका स्थान पूर्व दिशा और ईशानकोणके मध्यभागमें है तथा अनन्तका स्थान नैर्ऋत्यकोण और पश्चिमके मध्यभागमें है। इन्द्र आदिके बीज-मन्त्र क्रमशः इस प्रकार हैं—**लं रं मं क्षं वं यं सं हं आं नं**) इन दिक्पालोंके बाह्यभागमें उनके ही वज्र आदि आयुध हैं, जिनसे आवृत भगवान् पूजनीय होते हैं। (उन आयुधोंके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं—इन्द्रका वज्र, अग्निका शक्ति, यमका दण्ड, निर्ऋतिका खड्ग, वरुणका पाश, वायुका अङ्कुश, चन्द्रमाका गदा, ईशानका शूल, ब्रह्माका पद्म और अनन्तका चक्र।) उसी आवरणमें नल आदि वानर भी भगवान्‌की शोभा बढ़ाते हैं। साथ ही वसिष्ठ, वामदेव आदि मुनि भगवान्‌की उपासनामें संलग्न रहते हैं॥ १२—१६॥

सप्तम खण्ड

पूजा-यन्त्रका विस्तृत वर्णन

इस प्रकार संक्षेपसे पूजा-यन्त्रका वर्णन किया गया। अब उसका पूर्णतः निर्देश किया जाता है। समरेखाओंके दो त्रिकोण बनाकर उनके मध्यभागमें दो प्रणवोंका पृथक्-पृथक् उल्लेख करे। फिर उन दोनोंके बीचमें आद्यबीज (रां) लिखकर उसके नीचे साध्य-कार्यका उल्लेख करे। साध्यका नाम द्वितीयान्त होना चाहिये। आद्यबीजके ऊपरी भागमें साधकका नाम लिखना चाहिये। साधकका नाम षष्ठ्यन्त रहना चाहिये। तत्पश्चात् बीजके दोनों ओर—वाम-दक्षिण पार्श्वोंमें एक-एक 'कुरु' पदका उल्लेख करना चाहिये। बीजके बीचमें और साध्यके ऊपर श्रीबीज 'श्रीं' लिखे। बुद्धिमान् पुरुष यह सब बीज आदि इस प्रकार लिखे कि वे दोनों प्रणवोंसे सम्पुटित रहें। फिर छहों कोणोंमें दीर्घस्वरसे युक्त मूल-बीजका उल्लेख करे; साथ ही क्रमशः एक-एकके साथ '**हृदयाय नमः**', '**शिरसे स्वाहा**' इत्यादिको भी अङ्कित करे। (अर्थात् '**रां हृदयाय नमः**', '**रीं शिरसे स्वाहा**', '**रूं शिखायै वषट्**', '**रैं कवचाय हुम्**', '**रौं नेत्राभ्यां वौषट्**' तथा '**रः अस्त्राय फट्**'—इस प्रकार छः वाक्य छः कोणोंमें लिखने चाहिये।) कोणोंके पार्श्वभागमें रमाबीज (श्रीं) और मायाबीज (ह्रीं) लिखे तथा उसके आगे काम-बीज (**क्लीं**)-का उल्लेख करे। कोणके अग्रभाग और भीतरी भागोंमें क्रोध-बीज (हुम्) लिखकर मन्त्र-साधक उस 'हुम्' के दोनों पार्श्वोंमें सारस्वतबीज (ऐं) लिखे। फिर तीन वृत्त (गोलाकार रेखाएँ) बनाये (इनमें एक वृत्त तो षट्कोणके ऊपर होगा, एक मध्यमें होगा और एक दलोंके अग्रभागमें रहेगा)। इन तीन वृत्तोंके साथ-साथ एक अष्टदल कमल भी लिखे। कमलके जो केसर हैं, उनमें दो-दो अक्षरके क्रमसे सभी स्वर-वर्णोंका उल्लेख करे। आठों दलोंमें स्वरोंके ऊपर व्यञ्जन-वर्णोंके आठ वर्गोंका लेखन करे। (आठ वर्ग ये हैं—कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग, शवर्ग और लवर्ग)। उन आठों दलोंमें अष्टवर्गके ऊपर आगे बताये जानेवाले माला-मन्त्रके ४७ वर्णोंका एक-एक दलमें छः-छः वर्णके क्रमसे उल्लेख करे। अन्तिम दलमें अवशिष्ट पाँच वर्णोंका ही उल्लेख होगा। पूर्वोक्त प्रकारसे पुनः एक अष्टदल कमल बनाये। उसके आठ दलोंमें '**ॐ नमो नारायणाय**' इस अष्टाक्षर-मन्त्रके एक-एक अक्षरका न्यास करे। उसके केसरमें रमा-बीज (श्रीं) लिखे। उसके ऊपर बारह दलोंका कमल बनाये और उसके बारहों दलोंमें द्वादशाक्षर-मन्त्र '**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**' इसके एक-एक अक्षरको अङ्कित करे॥ १—८॥

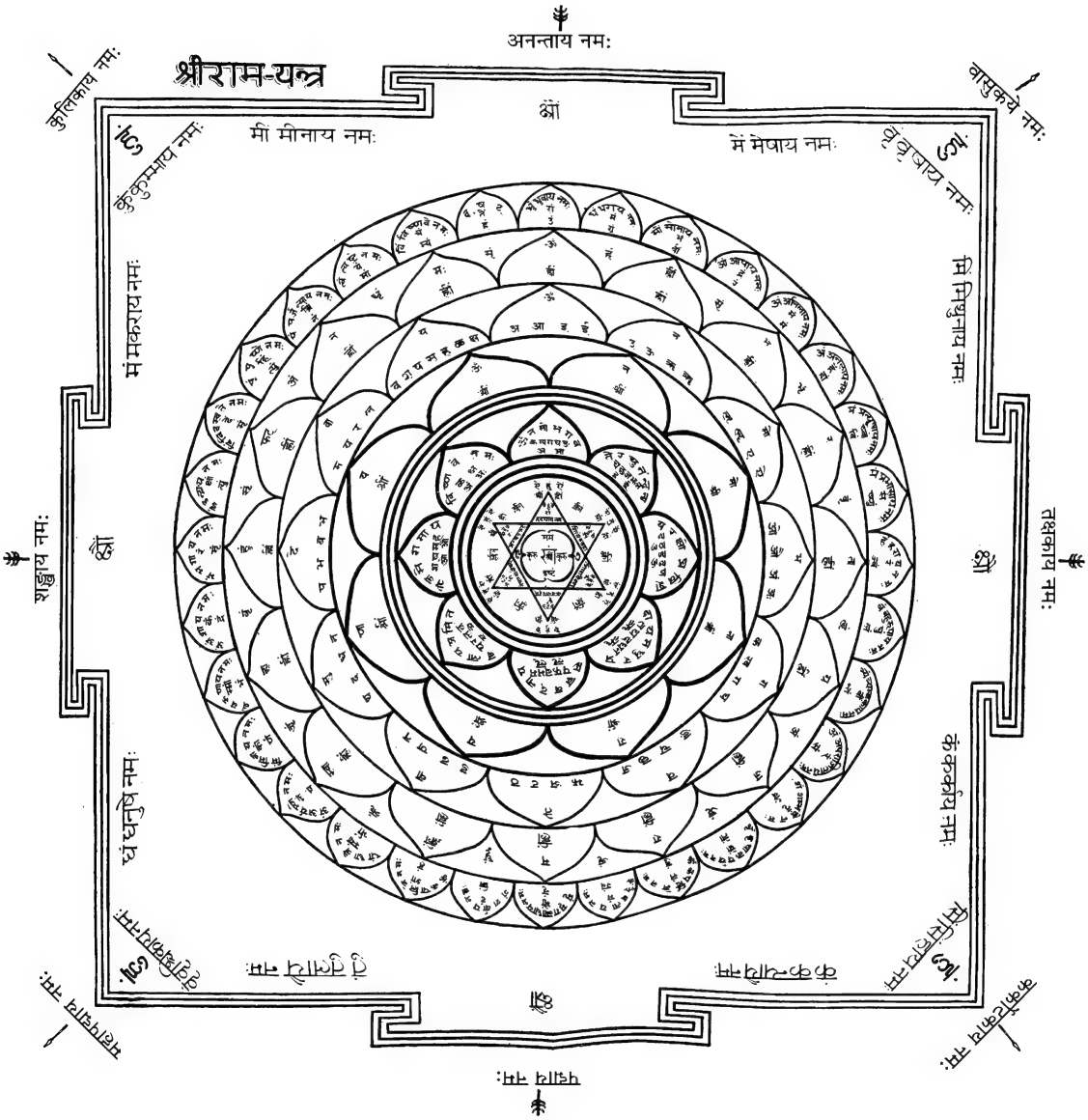
श्रीराम-यन्त्र
अनन्ताय नमः
कूर्मिकायै नमः
वायुकवचे नमः
ॐ
मी मीनाय नमः
मे मेषाय नमः
कुंकुमाय नमः
वृं वृन्दायै नमः
मं मकराय नमः
मिं मिहिरायै नमः
शङ्खाय नमः
क्षौं
क्षेत्रपालाय नमः
घं घण्टायै नमः
कं कमठाय नमः
खड्गिन्यै नमः
नंदिनीयै नमः
ऐं त्रिपुरायै नमः
शंखिन्यै नमः
पद्माय नमः

अष्टम खण्ड

पूजा-यन्त्रके अगले अङ्गोंका वर्णन

उक्त द्वादशदल कमलके केसरोंमें 'अकार' से लेकर 'क्ष' तकके वर्णोंको (१६ स्वर और ३५ व्यञ्जन) गोलाकार लिखे। (एक-एक केसरमें चार-चार अक्षर होंगे, किंतु अन्तिम केसरमें सात होंगे।) उसके बाह्यभागमें पुनः षोडशदल कमल लिखे और उसके केसरोंमें माया-बीज (ह्रीं)-का उल्लेख करे। उसके षोडश दलोंमें एक-एक अक्षरके क्रमसे 'हुं' 'फट्' 'नमः' तथा द्वादशाक्षर[1]-मन्त्रको अङ्कित करे। षोडश दलोंकी संधियोंमें मन्त्रवेत्ता पुरुष हनुमान्‌जी आदिके बीज-मन्त्र लिखे। वे मन्त्र इस प्रकार हैं—**हं सं भं वं लं अं जं** और **श्रं**। (इनके अतिरिक्त धृष्टि आदिके बीज-मन्त्रोंका भी उल्लेख करे। ये हैं—**धृं जृं वृं सृं ऋं अं धृं** और **सृं**। मूल श्लोकमें आये हुए 'च' से इनका समुच्चय होता है।) उसके बाह्यभागमें बत्तीस दलोंका महाकमल बनाये, जो नाद और बिन्दुसे युक्त हो। उसके दलोंपर यत्नपूर्वक नारसिंह-मन्त्रराज[2]के बत्तीस अक्षरोंको लिखे। उन दलोंमें ही आठ वसु, ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य और सबको धारण करनेवाले[3] वषट्कारका न्यास एवं ध्यान करे। (वसु, रुद्र, आदित्य और वषट्कार—ये सब मिलकर बत्तीस हैं। इनका क्रमशः एक-एक दलमें ध्यान एवं न्यास करना चाहिये। ध्रुव, धर, सोम, आप, अनिल, अनल, प्रत्यूष तथा प्रभास—ये आठ वसु बताये गये हैं। विष्णुपुराण (१।१।१५))-के अनुसार हर, बहुरूप, त्र्यम्बक, अपराजित, शम्भु, वृषाकपि, कपर्दी, रैवत, मृगव्याध, शर्व और कपाली—ये ग्यारह रुद्र हैं। धाता, अर्यमा, मित्र, वरुण, अंश, भग, इन्द्र, विवस्वान्, पूषा, पर्जन्य, त्वष्टा तथा विष्णु—ये बारह आदित्य हैं। उक्त बत्तीस दलोंवाले कमलके भी बहिर्भागमें भूगृह (भूपुर[4]) बनाये। उसके चारों दिशाओंमें वज्र तथा कोणोंमें शूलका चिह्न अङ्कित करे। उक्त भूपुरको तीन रेखाओंसे भी संयुक्त करे। ये रेखाएँ सत्त्वादि तीन गुणोंको सूचित करनेवाली होंगी। इसके सिवा—जैसे किसी मण्डपमें द्वार बने होते हैं, उसी प्रकार इसमें भी द्वार बनाये। साथ ही, उस भूपुरको राशि आदिसे भी विभूषित करे अर्थात् उसे ज्योतिर्मण्डलके आकारका बनाकर उसमें यथास्थान राशि आदि स्थापित करे। उक्त भूपुर-यन्त्रको शेषनागसे युक्त बनाये अर्थात् इस पुरमें प्रदर्शित करे कि इस यन्त्रको शेषनागने धारण कर रखा है। (अथवा उसको आठों दिशाओंसे आठों नागोंने धारण कर रखा है। उनके नाम इस प्रकार हैं—अनन्त, वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, शङ्ख और कुलिक)॥ १—६॥

नवम खण्ड

पूजा-यन्त्रके शेष भागका वर्णन तथा श्रीरामके माला-मन्त्रका स्वरूप एवं माहात्म्य

इस प्रकार भूपुर-यन्त्र लिखकर उसकी चारों दिशाओंमें नारसिंह-बीज-मन्त्रका और कोणोंमें वाराह बीज-मन्त्रका अङ्कन करे। 'क्', 'ष्', 'र्', अनुग्रह (औ), इन्दु (अनुस्वार), नाद (ध्वनि) तथा शक्ति (माया) आदिसे युक्त जो '**क्ष्रौं**' मन्त्र है, वही नारसिंह बीज-मन्त्र है। यह ग्रहबाधा-निवारण तथा शत्रुमारण

---

१. द्वादशाक्षर-मन्त्र यह है—'ॐ ह्रीं भरताग्रज राम क्लीं स्वाहा'।

२. नारसिंह-मन्त्रराज इस प्रकार है—

उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्। नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम्॥

३. वषट्कारके साथ मूल श्लोकमें 'धाता' शब्दका प्रयोग हुआ है, उसका अर्थ 'धारण करनेवाला' है। वषट्कार दानके अर्थमें प्रयुक्त होता है। दानसे ही समस्त लोक धारण किये जाते हैं, अतः 'धाता' पद 'वषट्कार' का विशेषण ही है। 'धाता' को देवतावाचक इसलिये नहीं मानना चाहिये कि बारह आदित्योंकी श्रेणीमें धाता नामक आदित्यका नाम आ चुका है। अथवा 'धाता' पद ब्रह्माजीका वाचक है और 'वषट्कार' उसका विशेषण है। ब्रह्माजी ही सबको जन्म और जीवन प्रदान करते हैं, अतः उनके लिये 'वषट्कार' विशेषण देना उपयुक्त ही है।

४. भूपुर-यन्त्रका लक्षण इस प्रकार दिया गया है—'भूमेश्चतुरस्रं सवज्रकं पीतं च'—चौकोर रेखा, वज्र-चिह्नका संयोग और पीला रंग—यह भूपुर है।

आदि कर्ममें विनियुक्त होकर अभीष्ट-सिद्धि दिलानेमें प्रसिद्ध है। अन्त्य वर्ण (हकार) अर्धीश अर्थात् उपकारसे युक्त हो, उसमें बिन्दु (अनुस्वार), नाद (ध्वनि) और शक्ति आदिका भी संयोग हो तो वह '**हुम्**' इस प्रकार वाराह-बीज होता है। इस यन्त्रमे उस '**हुम्**' को भी (कोणोंमें) अङ्कित करना चाहिये। अब श्रीरामसम्बन्धी माला-मन्त्रका वर्णन किया जायगा॥ १—३॥

इसमें पहले तो तार (प्रणव) है, फिर 'नमः' पद है। इसके बाद निद्रा (भ), फिर स्मृति (ग), फिर मेद (व), उसके बाद कामिका (तकार) है, जो रुद्र अर्थात् ए से युक्त है। तदनन्तर अग्नि (र), फिर मेधा (घ) है, जो अमर (उ)-से विभूषित है। उसके बाद दीर्घ कला (न) है, जो अक्रूर अर्थात् सौम्य—चन्द्रमा (अनुस्वार)से संयुक्त है। तत्पश्चात् ह्लादिनी (द) है। फिर दीर्घा कला (न) है, जो मानदा कला (आ)-से सुशोभित है। उसके बाद क्षुधा (य) है। यहाँतक '**ॐ नमो भगवते रघुनन्दनाय**' की सिद्धि हुई। तदनन्तर क्रोधिनी (र), अमोघा (क्ष्) और विश्व (ओ) है, जो मेधा (घ्)-से संयुक्त है। फिर दीर्घा (न) है, उसके बाद ज्वालिनी अर्थात् वह्निकला (व) है, जो सूक्ष्म—रुद्र (इकारकी मात्रा)-से युक्त है। फिर मृत्यु—प्रणवकला (श्) है, जो प्रतिष्ठा अर्थात् उच्चारणके आधारस्वरूप 'अ' से संयुक्त है। फिर ह्लादिनी (दा) और त्वक् (य) है। इससे '**रक्षोघ्नविशदाय**' इस मन्त्रभागका उद्धार हुआ। तदनन्तर क्ष्वेल (म), प्रीति (ध), अमर (उ), ज्योति (र), तीक्ष्णा (प्), जो अग्नि (र)-से संयुक्त है, श्वेता (स), जो अनुस्वारसे युक्त है, फिर कामिका अर्थात् तकारसे पाँचवाँ अक्षर (न), फिर 'ल' के बादका अक्षर (व), 'त' के बादवाले 'थ' के पीछेका अक्षर (द), फिर 'ध' के बादका अक्षर (न) है, जो अनन्त (आ)-से संयुक्त है। तत्पश्चात् दीर्घस्वरसे युक्त वायु (या), सूक्ष्म (ह्रस्व) इकारसे युक्त विष—मकार (मि), कामिका (त), फिर कामिकामें रुद्र (ए) का संयोग=(ते) है। तदनन्तर स्थिरा (ज) है, उसके बाद 'स' अक्षर और उसमें 'ए' की मात्रा है (से)। इस प्रकार '**मधुर-प्रसन्नवदनायामिततेजसे**' इस मन्त्रभागका उद्धार हुआ। इसके बाद तापिनी (ब), दीर्घ (ल) और उसमें भू यानी दीर्घ 'आ' की मात्रा है। फिर अनिल (य) है। इस प्रकार '**बलाय**' की सिद्धि हुई। तत्पश्चात् अनन्तग अनल अर्थात् 'आ' की मात्रासे युक्त रेफ (रा) है, फिर नारायणात्मक—अर्थात् आकारकी मात्रासहित काल—मकार (मा) है, उसके बाद प्राण (य) है। इससे '**रामाय**' की सिद्धि हुई। तदनन्तर विद्यायुक्त अम्भस् अर्थात् इकारकी मात्रासे युक्त वकार (वि) है। फिर पीता (ष्), रति (ण), और 'ल' के बादका (व) है, जो योनि (ए)-से युक्त है। इससे '**विष्णवे**' की सिद्धि हुई। अन्तमें पुनः नति—प्रणामका वाचक '**नमः**' शब्द और प्रणव है॥ ४—९॥

'ॐ नमो भगवते रघुनन्दनाय रक्षोघ्नविशदाय मधुरप्रसन्नवदनायामिततेजसे बलाय रामाय विष्णवे नमः ॐ॥'

यह सैंतालीस अक्षरोंका मालामन्त्र राज्याभिषिक्त भगवान् श्रीरामसे सम्बन्ध रखता है। सगुण होनेपर भी उपासकोंके तीनों गुणोंका नाशक है (अर्थात् त्रिगुणमयी मायाका बन्धन नष्ट करके उन्हें दिव्य साकेत धामकी प्राप्ति करानेवाला है)। इस मन्त्रको पहले बताये हुए क्रमसे ही लिखना चाहिये॥ १०॥

यह उपर्युक्त यन्त्र सर्वात्मक—सर्वस्वरूप है। प्राचीन आचार्योंने इसका उपदेश किया है तथा ऋषि-महर्षियोंने भी इस मन्त्रका सेवन किया है। जो इसका सेवन करते हैं, उन्हें यह मोक्ष देता तथा उनकी आयु और आरोग्यकी वृद्धि करता है। इतना ही नहीं, यह पुत्रहीनोंको पुत्र भी देता है। अधिक कहनेसे क्या लाभ, इस मन्त्रके सेवनसे मनुष्य सब कुछ बहुत शीघ्र पा जाते हैं। इसके आश्रयसे उपासक धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य आदिको भी प्राप्त कर सकते हैं॥ ११-१२॥

यह अत्यन्त गोपनीय रहस्य है। इस प्रकार जो यह यन्त्र बताया गया है, बिना उपदेशके किसी परम सामर्थ्यशाली पुरुषके लिये भी दुर्गम है। प्राकृत जनोंको इसका उपदेश नहीं देना चाहिये॥ १३॥

दशम खण्ड

पूजाकी सविस्तर विधि

सर्वप्रथम द्वार[१]-पूजा करके पद्मासन[२] आदि आसनसे बैठे; फिर प्रसन्नचित्त होकर पञ्च-भूत आदिकी शुद्धि करे। (पृथिवी आदि तत्त्वोंको क्रमशः अपने कारणमें लय करते हुए अन्तमें सब कुछ परमात्मामें लय कर देना ही तत्त्वोंका शोधन है। भूतशुद्धि[३] यह प्राण-

१. द्वारपूजाकी विधि इस प्रकार है। आचार्य विधिपूर्वक स्नान करके पूर्वाह्ण-कृत्य (संध्या-वन्दन आदि नित्य-नियम) कर लेनेके पश्चात् वस्त्र और माला आदिसे अलङ्कृत हो पूजनादिरूप यज्ञके लिये मौनभावसे यज्ञ-मण्डपमें पदार्पण करे। वहाँ सविधि आचमन करके सामान्यतः पूजाके लिये अर्घ्य बनाकर रख ले। फिर मन्त्रयुक्त जलसे द्वारका अभिषेक करके उसका पूजन आरम्भ करे। द्वारके ऊपरी भागमें उदुम्बर (गूलर)-का काष्ठ हो; उसमें विघ्न, लक्ष्मी तथा सरस्वतीका ('विं विघ्नाय नमः, लं लक्ष्म्यै नमः, सं सरस्वत्यै नमः'—इन मन्त्रोंसे) आवाहन-पूजन करे। तत्पश्चात् द्वारकी दक्षिण शाखामें विघ्नका और वाम शाखामें क्षेत्रपालका पूजन करे। इन दोनोंके पार्श्वभागमें क्रमशः गङ्गा-यमुनाका पुष्प और जलसे पूजन करे। (दक्षिण द्वारभागमें गङ्गाका और वाम द्वारभागमें यमुनाका पूजन करना उचित है।) तत्पश्चात् द्वारके निचले भागमें देहलीपर 'अस्त्राय फट्' का उच्चारण करते हुए 'अस्त्र' की पूजा करे। प्रत्येक द्वारपर इसी क्रमसे पूजन करना चाहिये।

२. पद्मासन लगानेकी विधि यह है। बायीं जाँघपर दाहिना चरण रखे और दायीं जाँघपर बायाँ चरण रखे। फिर दाहिने हाथको पीठकी ओरसे ले जाकर बायें चरणका अँगूठा दृढ़ताके साथ पकड़ ले। इसी प्रकार बायें हाथको पीछेकी ओरसे ले जाकर दाहिने चरणका अँगूठा पकड़ ले। फिर गर्दन झुकाकर अपनी ठोढ़ीको छातीसे सटा ले और नेत्रोंसे केवल नासिकाके अग्रभागको ही देखे। यह योगाभ्यासी पुरुषोंके उपयोगमें आनेवाला पद्मासन कहलाता है; यह रोगोंका नाश करनेवाला है। परंतु जो भगवान्‌की पूजा करने बैठा हो, वह दोनों हाथोंसे अँगूठा पकड़नेका कार्य न करे; क्योंकि वैसे करनेपर हाथ खाली न रहनेसे पूजा सम्भव न होगी।

३. भूतशुद्धिका प्रकार यह है। अपने शरीरमें पैरोंसे लेकर घुटनोंतकका भाग पृथिवीका स्थान है—ऐसी भावना करे। यह पृथिवीका स्थान चौकोर, वज्रके चिह्नसे युक्त और पीतवर्ण है; इसमें 'लं' बीज अङ्कित है। इस प्रकार चिन्तन करे। घुटनोंसे लेकर नाभितकके भागको जलका स्थान मानकर यह भावना करे कि इसकी आकृति अर्धचन्द्रके समान और वर्ण शुक्ल है। इसमें कमलका चिह्न है। इस जलमण्डलमें 'वं' बीज अङ्कित है। नाभिसे लेकर कण्ठतकके भागको भावनाद्वारा त्रिकोणाकार अग्निमण्डलके रूपमें देखे। उसका वर्ण लाल है, उसमें स्वस्तिकका चिह्न और 'रं' बीज अङ्कित है—इस प्रकार चिन्तन करे। कण्ठसे ऊपर भौंहोंके मध्यतकका भाग वायुमण्डल है। उसका वर्ण कृष्ण है, आकृति षट्कोण है और वह छः बिन्दुओंसे चिह्नित है। उसमें 'यं' बीज अङ्कित है। यों ध्यानद्वारा देखे। भौंहोंके मध्यसे लेकर ब्रह्मरन्ध्रतकका भाग आकाशमण्डल है। उसकी आकृति गोल और रंग धूएँके समान है। उसमें ध्वजका चिह्न और 'हं' बीज अङ्कित है। ऐसा ध्यान करे। इस प्रकार चिन्तन करनेके पश्चात् उन भूतोंका लय करे। पृथिवीको जलमें, जलको अग्निमें, अग्निको वायुमें, वायुको आकाशमें तथा आकाशको अव्यक्त प्रकृतिमें विलीन करे। यह प्रकृति ही अपरब्रह्म अथवा माया कहलाती है; इसका परमात्मामें लय करे। इस प्रकार भावनाद्वारा समस्त देहादि प्रपञ्चका परमात्मामें लय करके कुछ क्षणतक परमात्मरूपसे ही स्थित रहे, अर्थात् ध्यानद्वारा यह देखे कि मैं परमात्मामें मिलकर उनसे अभिन्न हो गया हूँ। फिर (ध्यानसे जगनेपर) अपने लिये भावनाद्वारा ही परम पवित्र शरीरकी सृष्टि करे। मानो परमात्मासे शब्द-ब्रह्मात्मिका माया प्रकट हुई है। यही जगन्माता और परा प्रकृति है। इस जगन्मातासे आकाश उत्पन्न हुआ है। आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल और जलसे पृथिवी प्रकट हुई है। इन विशुद्ध भूतोंसे अपना यह तेजोमय शरीर निर्मित हुआ है, जो परम पवित्र होनेके कारण आराध्यदेवकी आराधनाके सर्वथा योग्य है। उस शरीरमें सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, समस्त देवतारूप, सम्पूर्ण मन्त्रमय एवं कल्याणमय परमात्मा ही आत्मा एवं कारणरूपसे विराजमान हैं। इस प्रकारकी भावना ही मुख्यतः भूतशुद्धि कही गयी है।

भूतशुद्धिकी दूसरी प्रक्रिया इस प्रकार है। साधक यह भावना करे कि मेरा हृदय एक प्रफुल्ल कमल है, जो प्रणवके द्वारा विकासको प्राप्त हुआ है। धर्म ही इस हृदयकमलका मूल और ज्ञान ही नाल (मृणाल) है। यह बहुत ही शोभायमान है। अणिमा आदि आठ ऐश्वर्य ही इसके आठ दल हैं। वैराग्य ही इसकी कर्णिका (मध्यभाग) है। इस कर्णिकामें जीवात्मा विराजमान है, जिसकी आकृति दीपककी ज्योतिके समान है। ऐसी भावनाके साथ साधक उस जीवात्माको सुषुम्णा नाडीके मार्गसे ब्रह्मरन्ध्रतक ले जाय और उसे परमात्मामें मिला दे। उस समय वह अपनेको परमात्मासे अभिन्न देखता हुआ 'सोऽहम्' मन्त्रका चिन्तन करता रहे। फिर योगयुक्त विधिसे अन्य सब (पृथिवी आदि) तत्त्वोंको भी वहीं परमात्मामें विलीन कर दे। तत्पश्चात् अनादि जन्मोंमें सञ्चित किये हुए पाप-समुदायका एक पुरुषके

प्रतिष्ठा[१] और मातृकान्यास[२]का भी उपलक्षण है।) भगवान् श्रीरामके पूजन-क्रममें सिंहासनपीठके अधोभाग, ऊर्ध्वभाग तथा पार्श्वभाग आदिमें भी देव-पूजन करनेकी विधि है। पीठके ऊपर मध्यभागमें जो

रूपमें चिन्तन करे। ब्रह्महत्या उस पापपुरुषका मस्तक है, सुवर्णकी चोरी उसकी दो भुजाएँ हैं, सुरापानरूपी हृदयसे वह युक्त है। गुरुपत्नी-गमन ही उसके दो कटिभाग हैं। इन पापों और पापियोंका संसर्ग ही उसके युगल चरण हैं। उसका अङ्ग-प्रत्यङ्ग पातकमय ही है। उपपातक ही उसके रोएँ हैं। उसकी मूँछ-दाढ़ीके बाल और नेत्र लाल हैं। उसके शरीरका रंग काला है और वह अपने हाथोंमें ढाल-तलवार लिये हुए है। ऐसे पापमय पुरुषको अपनी कुक्षिके भीतर दाहिने भागमें स्थित देखते हुए चिन्तन करे। तत्पश्चात् पूरक आदिके क्रमसे अर्थात् पूरक, कुम्भक और रेचकरूप प्राणायामके द्वारा प्राणवायुको रोककर 'यं' बीज एवं वायुके द्वारा उस पापपुरुषके शरीरको सुखा दे। फिर अग्नि-बीज 'रं' के द्वारा अग्नि प्रकट करके उससे उसके शुष्क शरीरको जला डाले। तत्पश्चात् उत्तम बुद्धिसे युक्त विद्वान् पुरुष यह चिन्तन करे कि उस पापपुरुषके दग्ध शरीरका भस्म मेरी नासिकाके मार्गसे बाहर निकल आया है। तदनन्तर 'वं' इस बीजके द्वारा जल प्रकट करके उससे अपने समस्त शरीरको आप्लावित कर दे। इस प्रकार उस भावनामय दिव्य जलमें स्नान करके जब समस्त शरीर निर्मल एवं देवोपासनाके योग्य हो जाय, तब अपने साथ परमात्मामें लीन हुए पृथिवी आदि तत्त्वोंको पुनः अपनी-अपनी पूर्वावस्थामें पहुँचा दे। फिर जीवात्माको भी परमात्मासे पृथक् करके 'हंसः' इस मन्त्रका जप करते हुए विधिपूर्वक हृदय-कमलपर ले आये। इस प्रकार भूतशुद्धि कर लेना आवश्यक है। भूतशुद्धिके बिना की हुई पूजा अभिचार तथा बिना भक्तिके पूजनकी भाँति विपरीत फल दे सकती है।

१. इस प्रकार भूतशुद्धि करनेके पश्चात् प्राण-प्रतिष्ठा करनी चाहिये। इसका विनियोग इस प्रकार है—'अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः ऋग्यजुःसामाथर्वाणि छन्दांसि क्रियामयवपुःप्राणाख्या देवता आं बीजं ह्रीं शक्तिः क्रौं कीलकम्, अस्यां मूर्तौ प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः' इस प्रकार विनियोग करके भगवान्‌की प्रतिमा अथवा यन्त्रपर हाथ रखकर निम्नाङ्कित मन्त्र पढ़े—

'ॐ आं ह्रीं क्रों अं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अः क्रों ह्रीं आं हंसः सोऽहम्, अस्यां मूर्तौ अमुष्य प्राण इह प्राणाः।'

इसका उच्चारण करते समय भावना करनी चाहिये कि इस भगवद्विग्रहमें प्राण-संचार हो रहा है। 'अस्यां मूर्तौ' के आगे 'अमुष्य' के स्थानमें 'श्रीरामस्य' इत्यादि आवश्यकताके अनुसार जोड़ लेना चाहिये।

इसी प्रकार पूर्वोक्त बीजोंको 'ॐ आं....से लेकर....सोऽहम्' तक पुनः पढ़कर 'अस्यां मूर्तौ अमुष्य जीव इह स्थितः' इस वाक्यका उच्चारण करते हुए यह भावना करनी चाहिये कि इस भगवद्विग्रहमें जीवात्मारूपसे भगवान् स्वयं विराजमान हो रहे हैं। इसी प्रकार पुनः 'ॐ आं ह्रीं' इत्यादि पढ़कर 'अस्यां मूर्तौ अमुष्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणिपादपायूपस्थानि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु' इसका उच्चारण करते हुए विग्रह अथवा यन्त्रमें भगवान्‌की सम्पूर्ण इन्द्रियोंके आविर्भावकी भावना करे। 'अमुष्य' के स्थानपर सर्वत्र 'आराध्यदेव' के नामका षष्ठ्यन्त रूप लेना चाहिये और प्रत्येक कार्यमें तीन-तीन बार पाठ करना चाहिये। तत्पश्चात् गर्भाधानादि संस्कारकी सिद्धिके लिये पंद्रह बार प्रणव-जप करना आवश्यक है। प्राणप्रतिष्ठाके समय भगवद्विग्रहमें ऋषि आदिका न्यास भी करना चाहिये। उसका प्रकार यों है—'ॐ ब्रह्मविष्णुमहेश्वरऋषिभ्यो नमः' शिरसि। 'ऋग्यजुःसामाथर्वच्छन्दोभ्यो नमः' मुखे। 'प्राणदेवतायै नमः' हृदि। 'आं बीजाय नमः' गुह्ये। 'ह्रीं शक्तये नमः' पादयोः। 'क्रों कीलकाय नमः' नाभौ। इन छः मन्त्रोंका क्रमशः उच्चारण करते हुए सिर, मुख, हृदय, गुह्य (गुदा), दोनों पैर और नाभिका दाहिने हाथकी अङ्गुलियोंसे स्पर्श करना चाहिये। किसी-किसीके मतसे प्राणप्रतिष्ठा-मन्त्रमें केवल ब्रह्मा ही ऋषि, विराट् छन्द और प्रणव बीज है।

२. मातृकान्यासका क्रम इस प्रकार है। निम्नाङ्कित वाक्यका उच्चारण करके विनियोग करे—'ॐ अस्य मातृकान्यासमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छन्दः सरस्वती देवता भगवत्प्रीतये ललाटाद्यङ्गेषु मातृकावर्णानां न्यासे विनियोगः।' तत्पश्चात् निम्नाङ्कित छः वाक्योंको पढ़कर न्यास करे—१-'अं कं खं गं घं ङं आं' हृदयाय नमः। २-'इं चं छं जं झं ञं ईं' शिरसे स्वाहा। ३-'उं टं ठं डं ढं णं ऊं' शिखायै वषट्। ४-'एं तं थं दं धं नं ऐं' कवचाय हुम्। ५-'ओं पं फं बं भं मं औं' नेत्रत्रयाय वौषट्। ६-'अं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अः' अस्त्राय फट्। इनमेंसे पहले तीन वाक्योंको पढ़कर दाहिने हाथकी अँगुलियोंसे क्रमशः हृदय, सिर और शिखाका स्पर्श करना चाहिये। चौथे वाक्यको पढ़कर दाहिने हाथसे बायें और बायें हाथसे दायें कन्धेका एक साथ ही स्पर्श करना चाहिये। पाँचवें वाक्यका उच्चारण करके दाहिने हाथकी अङ्गुलियोंके अग्रभागसे दोनों नेत्रों और ललाटके मध्यभागका स्पर्श करना चाहिये तथा छठे वाक्यको पढ़कर दाहिने हाथको सिरके ऊपरसे बायीं ओरसे पीछेकी ओर ले जाकर दाहिनी ओरसे आगेकी ओर तर्जनी तथा मध्यमा अङ्गुलियोंसे बायें हाथकी हथेलीपर ताली बजाये। तदनन्तर ध्यान करे—'मैं उज्ज्वल कान्ति एवं तीन नेत्रोंसे विभूषित माता सरस्वतीदेवीकी शरण लेता हूँ। उनके मुख, भुजा, चरण, कटिभाग एवं वक्षःस्थल आदि अङ्ग पचास अक्षरोंमें विभक्त हैं। मस्तकपर अर्धचन्द्रजटित चमचमाता हुआ किरीट शोभा पा रहा है। उनके उरोज सब ओरसे उभरे हुए—स्थूल एवं ऊँचे हैं। वे अपने कर-कमलोंमें मुद्रा, अक्षसूत्र, अमृतपूर्ण कलश और विद्या धारण किये हुए हैं।' इस प्रकार ध्यान करके ललाट, मुख-मण्डल, दोनों नेत्र, दोनों कान, दोनों नासिका, दोनों कपोल, दोनों ओष्ठ, दोनों दन्तपङ्क्ति, मस्तक, मुख, दोनों बाहुमूल, दोनों कूर्पर (कोहनी), दोनों मणिबन्ध (कलाई), दोनों हाथोंके

अष्टदल कमल है, उसका भी पूजन करे। रत्नमय सिंहासनपर मुलायम, चिकनी तथा सिंहासनके आकारकी तूलिका (रूईदार गद्दी)-की भावना करके उसपर भगवत्स्वरूप आचार्यका पूजन करके पीठके अधोभागमें आराध्य-देवताके आसनके नीचे आधारशक्ति, कूर्म (कच्छप), नाग (शेषनाग) तथा पृथ्वीमय दो कमलोंकी भावना करके उन सबकी पूजा करे[१] ॥ १-२ ॥

विघ्न, दुर्गा, क्षेत्रपाल तथा वाणीका इनके नामके आदिमें बीज लगाकर नामके साथ चतुर्थी विभक्तिका प्रयोग करते हुए पूजन करना चाहिये। (नामके आदि अक्षरको ही प्रणव और बिन्दुसे सम्पुटित कर देनेपर वह देवताका बीजमन्त्र बन जाता है। ऐसा ही बीज लगाकर मण्डपके द्वारदेशमें विघ्न आदिकी पूजा करनी चाहिये। पूजाका मन्त्र इस प्रकार है—'**ॐ विं विघ्नाय नमः, ॐ दुं दुर्गायै नमः, ॐ क्षं क्षेत्रपालाय नमः, ॐ वां वाण्यै नमः**)'। फिर पीठके पायोंमें, जो अग्निकोण आदिमें स्थित हैं, क्रमशः धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका पूजन करे।[२] और पीठके अवयवगत पूर्वादि दिशाओंमें क्रमशः अधर्म, अनर्थ, अकाम और अमोक्षकी पूजा करे। फिर पीठके ऊपर मध्य-भागमें उत्तम पुरुषोंद्वारा पूजित सूर्य, चन्द्र एवं अग्निका क्रमशः पूजन करे। यन्त्रमें जो बीज (कर्णिका)-सहित तीन वृत्त (गोलाकार चिह्न) हैं, उन्हें क्रमशः सत्त्व, रज और तमका प्रतीक मानकर चिन्तन और पूजन करना चाहिये[३] ॥ ३-४ ॥

तत्पश्चात् दिशाओं और कोणोंमें स्थित कमलके आठ दलोंकी पूजा करे। इनमेंसे जो दल मध्यवर्ती दिशा अर्थात् कोणोंमें हैं, उनमें आग्नेय कोणसे आरम्भ करके क्रमशः आत्मा (लिङ्ग), अन्तरात्मा (जीव), परमात्मा (ईश्वर) और ज्ञानात्मा (लीला-पुरुषोत्तम)-का पूजन करे[४] तथा पूर्वादि दिशाओंमें क्रमशः माया-तत्त्व, विद्या-तत्त्व, कला-तत्त्व एवं पर-तत्त्वकी पूजा करे।[५] तदनन्तर विमला[६] आदि शक्तियोंका विधिवत् पूजन करे। फिर प्रधान देवताका आवाहन और पूजन करे।[७]

अङ्गुलिमूल, दोनों हाथोंके अङ्गुल्यग्र, दोनों ऊरुमूल, दोनों जानु (घुटने), दोनों गुल्फ (टखने), दोनों पैरोंके अङ्गुलिमूल, दोनों पैरोंके अङ्गुल्यग्र, दोनों पार्श्वभाग, पीठ, नाभि, उदर, हृदय, दायें कन्धे,ककुद् (गलेके पीछेका भाग), बायें कन्धे, हृदयादि दक्षिणहस्त, हृदयादि वामहस्त, हृदयादि दक्षिणपाद, हृदयादि वामपाद, हृदयादि उदर तथा हृदयादि मुख—इन अङ्गोंमें 'अं नमः, आं नमः' इत्यादि रूपसे ५१ मातृकावर्णोंका न्यास करे।

१. आधारशक्तिका ध्यान एक देवीके रूपमें करना चाहिये। वह अपने दोनों हाथोंमें दो कमल धारण किये हुए है। उस आधारशक्तिके मस्तकपर भगवान् कूर्म विराजमान हैं, उनकी कान्ति नीले रंगकी है। उनके ऊपर भगवान् अनन्त (शेषनाग)-की स्थिति है, जो ब्रह्ममयी शिलापर आसीन हैं। उनके श्रीअङ्ग कुन्दसदृश गौर हैं। उनके हाथमें चक्र है तथा उन्होंने मस्तकपर वसुन्धरादेवीको धारण कर रखा है। देवी वसुन्धराकी अङ्गकान्ति तमालके समान श्यामल है। वे नील कमल धारण करती हैं। उनके कटिप्रदेशमें लहराता हुआ समुद्र ही मेखला (करधनी)-की शोभा दे रहा है। उक्त वसुन्धरापर एक रत्नमय द्वीप है, जहाँ मणिमय मण्डप शोभा पा रहा है। इस क्रमसे मण्डपतककी पूजा करके उसके प्रवेश-द्वारपर विघ्न आदिकी पूजा करनी चाहिये।

२. धर्म आदिका ध्यान और पूजन-क्रम इस प्रकार है—साधकको उसकी इच्छाके अनुरूप सिद्धि प्रदान करनेवाले चार कल्पवृक्ष हैं, ऐसी भावना करके उनकी पूजा करे। फिर उनके नीचे मण्डलाकार एवं तेजसे जाज्वल्यमान वेदीकी भावना करके उसकी पूजा करे। उस वेदीपर रत्नमय पीठका धर्म आदिके साथ पूजन करे। धर्मका रंग लाल है, वह वृषभरूपसे स्थित है। अर्थका रंग साँवला है, वह सिंहकी आकृति धारण किये हुए है। कामका रंग हल्दीके समान पीला है, वह भूतकी आकृतिमें है तथा मोक्षका रंग नीला है, उसका आकार हाथीके समान है। पीठके पायोंमें अग्निकोण आदिमें धर्म आदिका तथा पीठके अन्य अवयवोंमें पूर्वादि दिशाओंमें क्रमशः अधर्म आदिका पूजन करे। तत्पश्चात् कमलका पूजन आरम्भ करे।

३. ॐ सं सत्त्वाय नमः, ॐ रं रजसे नमः, ॐ तं तमसे नमः—इन मन्त्रोंसे सत्त्वादिरूप तीनों वृत्तोंका पूजन करे।

४. पूजाके मन्त्र इस प्रकार हैं—ॐ आत्मने नमः, अन्तरात्मने नमः, परमात्मने नमः, ज्ञानात्मने नमः।

५. मायातत्त्वाय नमः। विद्यातत्त्वाय नमः। कलातत्त्वाय नमः। परतत्त्वाय नमः।

६. विमला, उत्कर्षिणी, ज्ञाना, क्रिया, योगा, प्रह्वी, सत्या, ईशाना और अनुग्रहा—ये पीठकी शक्तियाँ है। इनका स्थान अष्टदल कमलके केसरोंमें है। ये वर और अभयकी मुद्राओंसे युक्त होती हैं।

७. 'ॐ नमो भगवते रघुनन्दनाय····' इत्यादि मूल-मन्त्रका उच्चारण करके 'आहूतो भव' यों कहकर आवाहनकी मुद्रा दिखाये। दोनों हाथोंकी अञ्जलि बनाकर अनामिका अँगुलियोंके मूलपर्वपर अँगूठेको लगा देना—यह आवाहनकी मुद्रा है। यही अधोमुखी (नीचेकी

इसके बाद जल आदिसे अङ्गव्यूहोंकी[१] पूजा करके धृष्टि[२] आदि, लोकपालगण,[३] उनके अस्त्र,[४] वसिष्ठ[५] आदि मुनि तथा नील[६] आदिके साथ चन्दन आदि उपचारों तथा नाना प्रकारके श्रेष्ठ उपहारोंद्वारा श्रीरघुनाथजीकी आराधना करे। उनकी पूजा करके विधिपूर्वक जप आदि भी उन्हें समर्पित करे। 'जो ऐसी महिमावाले, जगत्के आधारभूत और सच्चिदानन्दस्वरूप हैं, जिनके करकमलोंमें गदा, चक्र, शङ्ख और पद्म शोभा पा रहे हैं तथा जो भव-बन्धनका नाश करनेवाले हैं, उन भगवान् श्रीरामको मैं प्रणाम करता हूँ।'[७] यों कहकर उनकी वन्दना करे। जो इस प्रकार भगवान् श्रीरामका ध्यान करते हैं, वे सब लोग मोक्ष (भगवान्का परमधाम) प्राप्त कर लेते हैं। विश्वव्यापी भगवान् श्रीराम लीला-संवरणकालमें सशरीर अन्तर्धान हो गये थे। (अन्य प्राणियोंकी भाँति उन्होंने देहत्याग नहीं किया था।) शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मरूप उनके आयुध भी साथ ही अन्तर्धान हुए। उन्होंने अपने स्वाभाविक स्वरूपको धारणकर सीताजीके साथ परमधाममें पदार्पण किया। उस समय उनके साथ सारा परिवार—पुरजन, परिजन, समस्त भाई, समस्त प्रजाजन तथा विभीषण आदि शत्रुके वंशज भी परमधाममें चले गये। जो उनके भक्त होते हैं, वे मनोवाञ्छित भोगोंको पाते हैं, प्राप्त हुए भोगोंका उपभोग करते हैं तथा अन्तमें वे भी भगवान्के परमपदको प्राप्त करते हैं। जो लोग सम्पूर्ण कामनाओं और अर्थोंको देनेवाली इन ऋचाओंका पाठ करते हैं, वे शुद्धान्तःकरण होकर मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं। जो पाठ करते हैं, वे निर्मल अन्तःकरणवाले होकर मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं॥ ५—१०॥

॥ अथर्ववेदीय श्रीरामपूर्वतापनीयोपनिषद् समाप्त ॥

शान्तिपाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

ओर मुखवाली) कर दी जाय तो स्थापिनी (बिठानेवाली) मुद्रा कहलाती है। अँगूठोंको ऊपर उठाकर दोनों हाथोंकी संयुक्त मुट्ठी बाँध लेनेपर संनिधापिनी (निकट सम्पर्कमें लानेवाली) मुद्रा बन जाती है। यदि मुट्ठीके भीतर अँगूठेको डाल दिया जाय तो संरोधिनी (रोक रखनेवाली) मुद्रा कहलाती है। दोनों मुट्ठियोंको उत्तान कर देनेपर इसका नाम सम्मुखीकरणी (सम्मुख करनेवाली) मुद्रा होता है।

१. हृदय, मस्तक आदि भिन्न-भिन्न अङ्गोंकी जल आदिसे पूजा ही अङ्गव्यूहोंकी पूजा है।

२. धृष्टि, जयन्त, विजय, सुराष्ट्र, राष्ट्रवर्धन, अकोप, धर्मपाल और सुमन्त्र।

३. इन्द्र, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, चन्द्रमा, ईशान, ब्रह्मा और अनन्त।

४. वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, अङ्कुश, गदा, शूल, चक्र और पद्म—ये क्रमशः इन्द्र आदिके आयुध हैं।

५. वसिष्ठ, वामदेव, जाबाल, गौतम, भरद्वाज, विश्वामित्र, वाल्मीकि, नारद, सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार।

६. नील, नल, सुषेण, मैन्द, शरभ, द्विविद, धनद, गवाक्ष, किरीट, कुण्डल, श्रीवत्स, कौस्तुभ, शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म—ये सोलह नील आदि हैं।

७. एवंभूतं जगदाधारभूतं रामं वन्दे सच्चिदानन्दरूपम्। गदारिशङ्खाब्जधरं भवारिं स यो ध्यायेन्मोक्षमाप्नोति सर्वः॥

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

अथर्ववेदीय

श्रीरामोत्तरतापनीयोपनिषद्

शान्तिपाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

प्रथम खण्ड

काशी एवं तारक-मन्त्रकी महिमा; ॐकाररूप पुरुषोत्तम रामके चार पाद

ॐ बृहस्पतिने याज्ञवल्क्यसे पूछा—'ब्रह्मन्! जिस तीर्थके सामने कुरुक्षेत्र भी छोटा लगे, जो देवताओंके लिये भी देव-पूजनका स्थान हो, जो समस्त प्राणियोंके लिये परमात्मप्राप्तिका निकेतन हो, वह कौन है?' यह प्रश्न सुनकर याज्ञवल्क्यने उत्तर दिया—'निश्चय ही अविमुक्त तीर्थ ही प्रधान कुरुक्षेत्र (सत्कर्मका स्थान) है। वही देवताओंके लिये भी देव-पूजाका स्थान है; वही समस्त प्राणियोंके लिये परमात्मप्राप्तिका निकेतन है। अतः जहाँ कहीं भी जाय, उस अविमुक्त तीर्थको ही प्रधान कुरुक्षेत्र माने। वही देवताओंके लिये भी देवाराधनका स्थान है। वही सम्पूर्ण प्राणियोंके लिये परब्रह्मप्राप्तिका स्थान है। यहीं जीवके प्राण निकलते समय भगवान् रुद्र तारक-ब्रह्मका उपदेश करते हैं, जिससे वह अमृतमय होकर मोक्ष प्राप्त कर लेता है। इसलिये अविमुक्त (काशी)-का ही सेवन करे। अविमुक्त तीर्थका कभी परित्याग न करे। ठीक ऐसी ही बात है।' इस प्रकार याज्ञवल्क्यने समझाया॥ १॥

तदनन्तर भरद्वाजने याज्ञवल्क्यजीसे पूछा—'भगवन्! कौन तारक (तारनेवाला) है और कौन तरता है?' इस प्रश्नके उत्तरमें वे प्रसिद्ध याज्ञवल्क्य मुनि बोले—'तारक-मन्त्र इस प्रकार होता है। दीर्घ आकारसहित अनल (रेफ, रकार) हो और वह रेफ बिन्दु (अनुस्वार)-से पहले स्थित हो; उसके बाद पुनः दीर्घ स्वरविशिष्ट रेफ हो और उसके अनन्तर '**माय नमः**' ये दो पद हों; इस प्रकार '**रां रामाय नमः**' यह तारक-मन्त्रका स्वरूप है। इसके सिवा '**राम**' पदके सहित '**चन्द्राय नमः**' और '**भद्राय नमः**' ये दो मन्त्र भी तारक ही हैं। ये तीन मन्त्र क्रमशः ॐकारस्वरूप, तत्स्वरूप और ब्रह्मस्वरूप हैं। ये ही क्रमशः 'सत्', 'चित्' और 'आनन्द' नाम धारण करते हैं। इस प्रकार इनकी उपासना करनी चाहिये। ॐकारमें प्रथम अक्षर अकार है, दूसरा अक्षर उकार है, तीसरा अक्षर मकार है, चौथा अक्षर अर्धमात्रा है, पञ्चम अक्षर अनुस्वार है और छठा अक्षर नाद है। (इस प्रकार छः अक्षरवाला तारक-मन्त्र होता है।) यह सबको तारनेवाला होनेसे तारक कहलाता है। उस ॐकार अथवा 'रां' इस बीज-मन्त्रमय अक्षरको ही तुम 'तारक ब्रह्म' समझो। वही उपासनाके योग्य है—यों जानना चाहिये। वह गर्भ, जन्म, जरावस्था, मृत्यु तथा सांसारिक महान् भयसे भलीभाँति तार देता है। इसलिये 'तारक' इस नामसे उसका कथन किया जाता है। जो ब्राह्मण इस तारक-मन्त्रका सदा जप करता है। वह सम्पूर्ण पापोंको पार कर जाता है, वह मृत्युको लाँघ जाता है, वह ब्रह्महत्यासे तर जाता है, वह भ्रूणहत्यासे तर जाता है तथा वह वीर-हत्यासे तर जाता है। इतना ही नहीं, वह सम्पूर्ण हत्याओंसे तर जाता है, वह संसारसे तर जाता है, सबको पार कर जाता है। वह जहाँ कहीं भी रहता हुआ अविमुक्त-क्षेत्र (काशीधाम)-में ही रहता है। वह महान् होता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है॥ २॥

इस विषयमें ये श्लोक हैं—

अकाराक्षरसम्भूतः सौमित्रिर्विश्वभावनः।
उकाराक्षरसम्भूतः शत्रुघ्नस्तैजसात्मकः॥
प्राज्ञात्मकस्तु भरतो मकाराक्षरसम्भवः।
अर्धमात्रात्मको रामो ब्रह्मानन्दैकविग्रहः॥
श्रीरामसांनिध्यवशाज्जगदानन्ददायिनी ।
उत्पत्तिस्थितिसंहारकारिणी सर्वदेहिनाम्॥
सा सीता भवति ज्ञेया मूलप्रकृतिसंज्ञिका।
प्रणवत्वात् प्रकृतिरिति वदन्ति ब्रह्मवादिनः॥

''सुमित्रानन्दन लक्ष्मणजी प्रणवके अकार अक्षरसे प्रादुर्भूत हुए हैं। ये जाग्रत्के अभिमानी 'विश्व' के रूपमें भावना करनेयोग्य हैं। (ये ही चतुर्व्यूहोंमें संकर्षणरूप हैं।) शत्रुघ्न स्वप्नके अभिमानी 'तैजस' रूप हैं, इनका आविर्भाव प्रणवके 'उ' अक्षरसे हुआ है। (चतुर्व्यूहोंमें इन्हींकी 'प्रद्युम्न' संज्ञा है।) भरतजी सुषुप्तिके अभिमानी 'प्राज्ञ' रूप हैं। ये प्रणवके 'म' अक्षरसे प्रकट हुए हैं। (चार व्यूहोंमें इन्हींको 'अनिरुद्ध' कहा गया है।) भगवान् श्रीराम प्रणवकी अर्धमात्रारूप हैं। ये ही तुरीय पुरुषोत्तम हैं। ब्रह्मानन्द ही इनका एकमात्र विग्रह है। (चतुर्व्यूहोंमें ये ही 'वासुदेव' नामसे प्रसिद्ध हैं।) श्रीरामके सामीप्य मात्रसे जो सम्पूर्ण देहधारियोंकी उत्पत्ति, पालन और संहार करनेवाली हैं, वे जगदानन्ददायिनी विदेहनन्दिनी सीता नाद-बिन्दुस्वरूपा हैं। वे ही 'मूल प्रकृति' के नामसे जाननेयोग्य हैं। प्रणवसे अभिन्न होनेके कारण ही उन्हें ब्रह्मवादी जन 'प्रकृति' कहते हैं।''

'ओम्' यह अक्षर (अविनाशी परमात्मा) है। यह प्रत्यक्ष दीखनेवाला सम्पूर्ण जगत् उसका ही उपव्याख्यान है—उसीकी महिमाका प्रकाशन करनेवाला है। जो पहले हो चुका है, जो अभी वर्तमान है तथा जो भविष्यमें होनेवाला है, वह सम्पूर्ण जगत् ॐकार ही है, तथा जो ऊपर बताये हुए तीनों कालोंसे अतीत दूसरा कोई तत्त्व है, वह भी ॐकार ही है। (ॐकार नाम है और परमात्मा नामी, नाम और नामीमें कोई अन्तर नहीं है—यह दिखानेके लिये ही यहाँ सब कुछ ॐकार बताया गया है।) निश्चय ही यह सब ब्रह्म है। यह सर्वान्तर्यामी आत्मा भी ब्रह्म है। इस परमात्माके चार पाद हैं। (यद्यपि परमात्मा एक और अखण्ड है, तथापि उसके सम्पूर्ण स्वरूपका बोध करानेके लिये ही उसमें चार पादों—अंशोंकी कल्पना की गयी है। जाग्रत् यानी स्थूल जगत्, स्वप्न अर्थात् सूक्ष्म जगत्, सुषुप्ति—प्रलयावस्था अर्थात् कारणतत्त्वमें लीन जगत् तथा इन सबसे अतीत विशुद्ध ब्रह्म—ये ही समग्र परमेश्वरके चार पाद अथवा अंश हैं। श्रीरामतत्त्वके वर्णनमें 'रां' यह बीज ही प्रणव है तथा पुरुषोत्तम राम सम्पूर्ण परमेश्वर हैं। इनके चार पाद या अंश हैं—लक्ष्मण, शत्रुघ्न, भरत तथा कौसल्यानन्दन श्रीराम। ये चारों मिलकर ही सम्पूर्ण राम हैं। जैसे सब कुछ 'ओम्' है, वैसे ही 'रां' भी है। 'रां' और 'ॐ' में माहात्म्य और महिमाकी दृष्टिसे कोई अन्तर नहीं है। अतः यह सम्पूर्ण जगत् श्रीरामकी ही महत्ताका प्रकाशन कर रहा है।)

जाग्रत्-अवस्थाकी भाँति यह सम्पूर्ण स्थूल जगत् जिसका अवयव-संस्थान (शरीर) है; जो बहिःप्रज्ञ है—जिसका ज्ञान इस बाह्य जगत्में सब ओर फैला हुआ है; भूः, भुवः आदि सात लोक ही जिसके सात अङ्ग हैं; पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच कर्मेन्द्रिय, पाँच प्राण और चार अन्तःकरण—ये उन्नीस समष्टि करण ही जिसके मुख हैं; जो इस स्थूल जगत्का भोक्ता अर्थात् इसको जानने और अनुभव करनेवाला है—ऐसा वैश्वानर (विश्वरूप पुरुषोत्तम) ही सम्पूर्ण परमेश्वरका पहला पाद है। (लीलापुरुषोत्तम श्रीरामके चार पादोंमेंसे प्रथम पाद श्रीलक्ष्मणजी हैं। ये शेषनागके रूपमें अखिल विश्वके आश्रय होनेके कारण ही 'विश्व' अथवा 'वैश्वानर' नाम धारण करते हैं तथा श्रीरामकी प्राप्तिके लिये प्रथम उपाय है—श्रीलक्ष्मणजीकी आराधना। अतएव उन्हें प्रथम पाद कहा गया है। वे सदा जागरूक स्थितिमें रहते हैं, अतएव 'जागरितस्थान' हैं। बाहरकी सम्पूर्ण बातोंको जाननेमें सतत सावधान रहनेके कारण उन्हें 'बहिःप्रज्ञ' कहा गया है। भूर्भुवः आदि सात लोक अथवा तल-अतल आदि सात पातालोंकी स्थिति उनके ही अङ्गोंपर है; अतः वे 'सप्ताङ्ग' हैं। पुराण, न्याय, मीमांसा और धर्मशास्त्र; व्याकरण, ज्यौतिष, छन्द, कल्प, शिक्षा एवं निरुक्त—ये छः अङ्ग; ऋक्, साम, यजुः एवं अथर्व—ये चार वेद तथा आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद, अर्थशास्त्र और दर्शन—ये सब मिलकर उन्नीस विद्याएँ श्रीलक्ष्मणजीके मुखमें स्थित हैं—अर्थात् अपने मुखद्वारा वे इन विद्याओंका वर्णन करनेमें समर्थ हैं; अतएव उन्हें 'एकोनविंशतिमुख' कहा गया है। संकर्षणरूपसे प्रलयकालमें अपनी मुखाग्निद्वारा समस्त

स्थूल जगत्को वे ग्रस लेते हैं, अतः स्थूलभुक् हैं।)

मनकी सूक्ष्म वासनाद्वारा कल्पित मनोमय जगत् ही स्वप्न कहलाता है; अतः 'स्वप्न' पद यहाँ 'सूक्ष्म जगत्' का ही बोधक है। वह सूक्ष्म जगत् ही जिसका स्थान है, जो अन्तःप्रज्ञ है अर्थात् जिसका ज्ञान सूक्ष्म जगत्में व्याप्त है तथा जो पूर्वोक्त सात अङ्गों और उन्नीस मुखोंसे युक्त है, वह प्रविविक्त—सूक्ष्म जगत्का भोक्ता (जगत्के सूक्ष्म तत्त्वोंका अनुभव करनेवाला) तैजस (प्रकाशस्वरूप हिरण्यगर्भ) उस पूर्णतम परमेश्वरका द्वितीय पाद है। (श्रीरामपक्षमें श्रीशत्रुघ्न ही पूर्णतम परमात्मा श्रीरामके द्वितीय पाद—अंश हैं। लक्ष्मणजीकी अपेक्षा दूसरे होनेके कारण ये द्वितीय हैं। प्रद्युम्न—कामके अंश होनेसे ये सबके मनमें स्थित रहते हैं। स्वप्नावस्थामें अन्य इन्द्रियोंके सुप्त हो जानेपर भी मन अपना कार्य करता रहता है, अतः मनके साथ उसमें निवास करनेवाले मनोभवरूप शत्रुघ्नजीकी भी स्वप्नमें स्थिति रहती ही है; इसलिये उनको 'स्वप्नस्थान' कहा गया है। मनमें स्थित होनेसे वे अन्तःकरणकी बातोंको जानते हैं, इसलिये अन्तःप्रज्ञ हैं। जैसे स्थूल जगत्का भार शेषरूपधारी लक्ष्मणपर है, उसी प्रकार सूक्ष्म लोकोंका भार समष्टि मनमें स्थित 'प्रद्युम्न'—कामपर है। समष्टि मन ही समस्त सूक्ष्म लोकोंका आधार है। उसमें रहनेवाले संकल्पमय प्रद्युम्न ही उस भारको वहन करते हैं। वे शत्रुघ्नसे अभिन्न हैं। अतः भूः आदि सात सूक्ष्म लोकोंका भार जिनके अङ्गोंपर है, वे शत्रुघ्नजी भी 'सप्ताङ्ग' हैं। उन्नीस मुख पूर्ववत् समझने चाहिये। जो सूक्ष्म लोकोंका अधिष्ठाता है, वह सूक्ष्म तत्त्वोंका भोक्ता और अनुभव करनेवाला होगा ही; अतः शत्रुघ्नजी ही 'प्रविविक्तभुक्' हैं। तैजसका अर्थ यहाँ तेजोमय—परम कान्तिमान् है। प्रद्युम्न—कामके स्वरूप होनेसे शत्रुघ्नका सौन्दर्य अप्रतिम है; अतः वे 'तैजस' कहे गये हैं।)

जिस अवस्थामें सोया हुआ मनुष्य किसी भी भोगकी कामना नहीं करता, कोई भी स्वप्न नहीं देखता, वह सुषुप्ति-अवस्था है। सुषुप्ति-अवस्थासे यहाँ प्रलयावस्थाकी ओर संकेत किया गया है। उस समय समस्त जगत् अपने कारणतत्त्वमें विलीन हो जाता है। अतः सुषुप्त अर्थात् कारणतत्त्व ही जिसका संस्थान (शरीर) है, जो एकरूप है, केवल घनीभूत प्रज्ञान ही जिसका स्वरूप है, जो केवल आनन्दमय है, चैतन्य ही जिसका मुख है, जो एकमात्र आनन्दका ही उपभोग करनेवाला है, वह 'प्राज्ञ' ही परब्रह्म परमात्माका तृतीय पाद है। (श्रीरामपक्षमें श्रीभरतलालजी ही तृतीय पाद हैं। लक्ष्मण और शत्रुघ्नकी अपेक्षासे तो वे तृतीय हैं और श्रीरामकी प्राप्ति करानेवाले होनेके कारण **[श्रीरामं पादयति—गमयति इति पादः**, इस व्युत्पत्तिके अनुसार] 'पाद' कहे गये हैं। जहाँ इन्द्रियवर्ग और मन दोनों सो जाते हैं—दोनोंके अनियन्त्रित व्यापार बंद हो जाते हैं, उस शम-दमसे सम्पन्न स्थिरप्रज्ञताकी अवस्थाको ही यहाँ 'सुषुप्ति' कहा है। इसमें सुप्त अर्थात् जितेन्द्रिय पुरुष न तो स्थूल भोगोंकी इच्छा करता है और न स्वप्न—सूक्ष्म भोगोंकी ओर ही दृष्टि डालता है। इस जितेन्द्रियता एवं स्थिरप्रज्ञतामें ही स्थित होनेके कारण भरतजी 'सुषुप्त-स्थान' कहे गये हैं। उन्होंने भी पिताकी ओरसे स्वतः प्राप्त हुए राज्यकी कामना नहीं की—स्वप्नमें भी उसका चिन्तन नहीं किया। वे नन्दिग्राममें समाधि लगाकर भगवान्के साथ एकीभूत हो गये थे। यों भी सदा श्रीरघुनाथजीका ही चिन्तन करनेके कारण वे उनके साथ एकरूप हो गये थे। वे प्रज्ञानघन अर्थात् महाप्राज्ञ—परम बुद्धिमान् हैं श्रीरघुनाथजीका अनन्य भक्त होना ही बुद्धिके उत्कर्षका परिचायक है। हर्ष-शोक आदिसे विचलित न होनेके कारण वे सदा 'आनन्दमय' कहे गये हैं। अनिरुद्धस्वरूप होनेके कारण उन्हें आनन्दका भोक्ता कहा गया है। उनमें विवेकशक्तिकी प्रधानता होनेसे ही वे 'चेतोमुख' हैं। 'प्राज्ञ' उनकी संज्ञा है। परम ज्ञानी—कुशाग्र-बुद्धि होनेके कारण उनको 'प्राज्ञ' कहा गया है।)

यह तीन पादोंके रूपमें वर्णित परमेश्वर (एवं लीलापुरुषोत्तम श्रीराम) सबका ईश्वर (शासक) है। यह सबको जाननेवाला है। यही सबका अन्तर्यामी है। यही सम्पूर्ण जगत्का कारण है तथा यही सम्पूर्ण भूतोंकी उत्पत्ति, (स्थिति) और प्रलयका स्थान है। जिसकी प्रज्ञा न तो अन्तर्मुखी है न बहिर्मुखी है, न दोनों ओर मुखवाली ही है; जो न प्रज्ञानघन है, न जाननेवाला है, न नहीं जाननेवाला ही है; जिसको देखा नहीं गया, व्यवहारमें नहीं लाया जा सकता और पकड़ा भी नहीं जा सकता; जिसका कोई लक्षण नहीं है, जो चिन्तनमें नहीं आ सकता, जो किसी विशेष संकेतसे भी बतलानेमें नहीं आ सकता; एकमात्र आत्मसत्ताकी प्रतीति ही जिसका सार है तथा जिसमें प्रपञ्चका सर्वथा

अभाव है, ऐसे सर्वथा शान्त एवं कल्याणमय अद्वैत-तत्त्व (परब्रह्म)-को ही ज्ञानीजन समग्र परमेश्वरका चतुर्थ पाद मानते हैं। वह परमात्मा है और वही जाननेके योग्य है। (श्रीरामपक्षमें भी '**नान्तःप्रज्ञम्**' आदि पदोंका यही अर्थ है। यहाँ श्रुति अनिर्वचनीय एवं सर्वथा विलक्षण श्रीराम-तत्त्वका तटस्थभावसे संकेतमात्र करती है। स्वरूपतः वर्णन करनेमें तो वह सर्वथा असमर्थ है; क्योंकि वाणीकी वहाँतक पहुँच ही नहीं है।) वे पूर्ण ब्रह्म परमात्मा (श्रीराम) सदा उज्ज्वल (निर्मल यशसे प्रकाशमान) हैं। अविद्या और उसके कार्योंसे सर्वथा रहित हैं। अपने भक्तजनोंके आत्माका अज्ञानमय बन्धन वे हर लेते हैं। सर्वदा अद्वैत हैं—उनमें द्वैतका सर्वथा अभाव है। वे आनन्दमूर्ति हैं। सबके अधिष्ठान हैं। सत्तामात्र उनका स्वरूप है। अविद्याजनित अन्धकार और मोह उनमें स्वभावतः नहीं हैं अथवा उनकी शरणमें जाते ही अविद्यामय अन्धकार और मोहका सर्वथा नाश हो जाता है। ऐसे जो अनिर्वचनीय परमात्मा श्रीराम हैं, वह मैं ही हूँ—इस प्रकार चिन्तन करना चाहिये। ॐ, तत्, सत्, यत् और परं ब्रह्म आदि नामोंसे प्रतिपादित होनेवाले जो चिन्मय श्रीरामचन्द्रजी हैं, वह मैं ही हूँ; ॐ—सच्चिदानन्दमय, परम ज्योतिःस्वरूप जो वे श्रीरामभद्र हैं, वह मैं हूँ, वह मैं ही हूँ—इस प्रकार अपनेको सामने लाकर मनके द्वारा परब्रह्म परमात्मा श्रीरामके साथ एकता करे—भगवान्‌के साथ अपनी अभिन्नताका चिन्तन करे।

जो लोग सदा यथार्थरूपसे समझकर 'मैं राम हूँ' यों कहते हैं, वे संसारी नहीं हैं। निश्चय ही वे श्रीरामके ही स्वरूप हैं, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

यह उपनिषद् है। जो इस प्रकार जानता है, वह मुक्त हो जाता है—इस प्रकार याज्ञवल्क्यजीने उपदेश दिया॥ ३॥

तदनन्तर महर्षि अत्रिने इन सुप्रसिद्ध याज्ञवल्क्य मुनिसे प्रश्न किया—'यह जो अनन्त एवं अव्यक्त आत्मा (परमात्मा) है, इसे मैं कैसे जानूँ?'

तब वे प्रसिद्ध याज्ञवल्क्यजी बोले—उस अव्यक्त परमात्माकी अविमुक्त क्षेत्रमें उपासना करनी चाहिये। यह जो अनन्त एवं अव्यक्त आत्मा है, वह अविमुक्त क्षेत्रमें प्रतिष्ठित है।

प्रश्न—किंतु उस अविमुक्त क्षेत्रकी स्थिति कहाँ है?

उत्तर—अविमुक्त क्षेत्र वरणा और नाशीके मध्यमें प्रतिष्ठित है।

प्रश्न—'वरणा' नामसे कौन प्रसिद्ध है? और 'नाशी' किसका नाम है?

उत्तर—सम्पूर्ण इन्द्रियकृत दोषोंका वारण करती है, इससे वह 'वरणा' है और समस्त इन्द्रियजनित पापोंका नाश करती है, इससे वह 'नाशी' कहलाती है।

प्रश्न—इस अविमुक्तक्षेत्रका आध्यात्मिक स्थान कौन है?

उत्तर—भौंहों और नासिकाकी जो सन्धि है (जहाँ इडा और पिङ्गला नामकी दो नाडियाँ मिली हुई हैं), वह द्युलोक तथा उससे भी उत्कृष्ट ज्योतिर्मय परमधामकी सन्धिका स्थान है। निश्चय ही ब्रह्मवेत्ता पुरुष इस सन्धिकी ही 'सन्ध्या' के रूपमें उपासना करते हैं। अतः उस अव्यक्त परमात्मा श्रीरामकी अविमुक्त क्षेत्रमें रहकर अविमुक्तमें (भौंहों और नासिकाकी सन्धिमें) ही उपासना करनी चाहिये। जो उसे इस प्रकार जानता है अर्थात् जो ऊपर बताये अनुसार यह भलीभाँति समझता है कि 'अव्यक्त परमात्माकी उपासनाका आधिभौतिक स्थान अविमुक्तक्षेत्र (काशी) और आध्यात्मिक स्थान भौंहों एवं नासिकाके मध्यका भाग है—यहीं ध्यानद्वारा उस अव्यक्त तत्त्वका चिन्तन करना चाहिये', वही परमात्मासे नित्य सम्बद्ध (अविमुक्त) ज्ञानका उपदेश कर सकता है। यह अविनाशी, अनन्त, अव्यक्त, परिपूर्णानन्दैक-चिन्मयविग्रह परमात्मा अविमुक्तक्षेत्रमें प्रतिष्ठित है।

इसके बाद याज्ञवल्क्यजीने अत्रि मुनिसे यह कथा कही—

एक समय भगवान् शङ्करने काशीमें एक हजार मन्वन्तरतक जप, होम और पूजन आदिके द्वारा श्रीरामकी आराधना करते हुए श्रीराम-मन्त्रका जप किया। इससे प्रसन्न होकर भगवान् श्रीरामने शङ्करजीसे कहा—'परमेश्वर! तुम्हें जो अभीष्ट हो, वह वर माँग लो; मैं उसे दूँगा।' तब सत्यानन्दचिन्मय भगवान् शङ्करने श्रीरामसे कहा—'भगवन्! मणिकर्णिका तीर्थमें, मेरे काशीक्षेत्रमें अथवा गङ्गामें या गङ्गाके तटपर जो प्राण त्याग करता है, उस जीवको आप मुक्ति प्रदान कीजिये। इसके सिवा दूसरा कोई वर मुझे अभीष्ट नहीं है।'

तब भगवान् श्रीरामने कहा—'देवेश्वर! तुम्हारे इस पावन क्षेत्रमें जहाँ कहीं भी प्राण त्याग करनेवाले कीड़े-मकोड़े आदि भी तत्काल मुक्त हो जायँगे, इसमें कोई संशय नहीं है। तुम्हारे इस अविमुक्तक्षेत्रमें सब लोगोंकी मुक्ति-सिद्धिके लिये मैं पाषाणकी प्रतिमा आदिमें सदा निवास करता रहूँगा। शिवजी! इस काशीधाममें मेरे इस षडक्षर तारक-मन्त्र (**रां रामाय नमः**) द्वारा जो भक्तिपूर्वक मेरी पूजा करेगा, मैं उसे ब्रह्महत्या आदि पापोंसे मुक्त कर दूँगा; तुम चिन्ता न करो। तुमसे अथवा ब्रह्माजीके मुखसे जो यहाँ षडक्षर-मन्त्रकी दीक्षा लेते हैं, वे जीते-जी तो मन्त्रसिद्ध होते हैं और मृत्युके बाद जन्म-मरणसे मुक्त हो मुझे प्राप्त कर लेते हैं। शिवजी! जिस किसी भी मरणासन्न प्राणीके दाहिने कानमें तुम स्वयं मेरे मन्त्रका उपदेश करोगे, वह निश्चय ही मुक्त हो जायगा।'

इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीके द्वारा वरदानसे अनुगृहीत अविमुक्तक्षेत्रका जो दर्शन करता है, वह जन्मान्तरके दोषोंको दूर कर देता है तथा वह जन्मान्तरके पापोंका नाश कर डालता है॥ ४॥

तदनन्तर उन प्रसिद्ध याज्ञवल्क्यजीसे भरद्वाजने पूछा—'भगवन्! किन मन्त्रोंद्वारा स्तुति करनेपर भगवान् श्रीराम प्रसन्न होते हैं और अपने स्वरूपका प्रत्यक्ष दर्शन कराते हैं? उन मन्त्रोंका आप हमें उपदेश करें।'

तब वे प्रसिद्ध महर्षि याज्ञवल्क्यजी बोले—'ब्रह्मन्! जिस प्रकार भगवान् शङ्करको वरदान देते हुए श्रीरामजीने काशीका महत्त्व बताया था, उसी प्रकार किसी समय ब्रह्माजीको भी उन्होंने वैसा ही उपदेश दिया था। उनके द्वारा ऐसा उपदेश पाकर ब्रह्माजीने निम्राङ्कित गद्यमयी गाथासे उन्हें नमस्कार किया।

जो सम्पूर्ण विश्वके आधार और महाविष्णुरूप हैं, रोग-शोकसे रहित नारायण हैं, परिपूर्ण आनन्द-विज्ञानके आश्रय हैं और परम प्रकाशरूप हैं, उन परमेश्वर श्रीरामका मन-ही-मन स्तवन करते हुए ब्रह्माजीने उनकी इस प्रकार स्तुति की—

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्दात्मा यत् परं ब्रह्म भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यश्चाखण्डैकरसात्मा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यच्च ब्रह्मानन्दामृतं भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यत् तारकं ब्रह्म भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ४॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यो ब्रह्मा विष्णुरीश्वरो यः सर्वदेवात्मा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ५॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् ये सर्वे वेदाः साङ्गाः सशाखाः सपुराणा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ६॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यो जीवात्मा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ७॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यः सर्वभूतान्तरात्मा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ८॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् ये देवासुर-मनुष्यादिभावा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ९॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् ये मत्स्यकूर्माद्यवतारा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १०॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यश्च प्राणो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ११॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् योऽन्तः-करणचतुष्टयात्मा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १२॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यश्च यमो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १३॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यश्चान्तको भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १४॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यश्च मृत्युर्भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १५॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यच्चामृतं भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १६॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यानि पञ्चमहाभूतानि भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १७॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यः स्थावरजङ्गमात्मा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १८॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् ये च पञ्चाग्नयो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १९॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् याः सप्तमहाव्याहृतयो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २०॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् या विद्या भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २१॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् या सरस्वती भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २२॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् या लक्ष्मीर्भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २३॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् या गौरी भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २४॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् या जानकी भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २५॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यच्च त्रैलोक्यं भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २६॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यः सूर्यो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २७॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यः सोमो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २८॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यानि च नक्षत्राणि भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २९॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् ये च नवग्रहा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३०॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् ये चाष्टौ लोकपाला भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३१॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् ये चाष्टौ वसवो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३२॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् ये चैकादश रुद्रा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३३॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् ये च द्वादशादित्या भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३४॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यच्च भूतं भव्यं भविष्यद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३५॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यश्च ब्रह्माण्डस्यान्तर्बहिर्व्याप्नोति विराड् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३६॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यो हिरण्यगर्भो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३७॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् या प्रकृतिर्भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३८॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यश्चोङ्कारो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३९॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यश्चतस्रोऽर्द्धमात्रा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ४०॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यः परमपुरुषो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ४१॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यश्च महेश्वरो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ४२॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यश्च महादेवो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ४३॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् य ओं नमो भगवते वासुदेवाय यो महाविष्णुर्भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ४४॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यः परमात्मा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ४५॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यो विज्ञानात्मा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ४६॥

ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः स भगवान् यः सच्चिदानन्दैकरसात्मा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ४७॥

ॐ जो जगत्-प्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे निश्चय ही भगवान् (षड्विध* ऐश्वर्यसे सम्पन्न)हैं, अद्वितीय परमानन्दस्वरूप हैं। जो सर्वोत्कृष्ट ब्रह्म तथा भूर्भुवः स्वः—ये तीनों लोक हैं, वह सब भी वे ही हैं; उन श्रीरामचन्द्रजीको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सर्वत्र विख्यात श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे निश्चय ही भगवान् हैं तथा जो अखण्डैकरसस्वरूप परमात्मा एवं भूः, भुवः, स्वः—ये तीनों लोक हैं, वह सब भी वे ही हैं। निश्चय ही उन्हें मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे निश्चय ही भगवान् हैं तथा जो आनन्दमय, अमृतमय ब्रह्म तथा भूः आदि तीनों लोक हैं, वह सब भी उन्हींका स्वरूप है। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं; तथा जो तारक ब्रह्म और भूः, भुवः, स्वः नामसे प्रसिद्ध तीनों लोक हैं, वह सब कुछ उन्हींका स्वरूप है। उन

* सम्पूर्ण ऐश्वर्य, सम्पूर्ण धर्म, सम्पूर्ण यश, सम्पूर्ण श्री, सम्पूर्ण ज्ञान और सम्पूर्ण वैराग्य—इन छःका नाम भग है। जिन पूर्णतम परमेश्वरमें ये छहों परिपूर्णरूपसे नित्य-निरन्तर स्थित रहते हैं, वे 'भगवान्' कहे गये हैं।

भगवान् श्रीरामको मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो ब्रह्मा, विष्णु और शिव हैं, जो सर्वदेवमय परमात्मा हैं और जो भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो अङ्गोंसहित सम्पूर्ण वेद, उनकी शाखाएँ, पुराण तथा भूः आदि तीनों लोक हैं, उन सबके रूपमें भी वे ही हैं। उन भगवान्‌को निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं, तथा जो जीवात्मा और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान्‌को निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो सम्पूर्ण प्राणियोंका अन्तरात्मा और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो देवता, असुर और मनुष्य आदि भाव (जातियाँ) तथा भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो मत्स्य, कच्छप आदि अवतार और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। निश्चय ही उन भगवान् श्रीरामको मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो प्राण और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार—इन चार प्रकारके अन्तःकरणोंमें अवस्थित चेतन आत्मा और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे सब भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो यम और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो 'अन्तक' एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो मृत्यु एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है॥ १—१५॥

'ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो अमृत एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं; तथा जो पाँच महाभूत और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो स्थावर-जङ्गमके आत्मा (अथवा चराचरस्वरूप) एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो आहवनीय आदि पाँच अग्नि एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं; तथा जो भूः आदि सात महाव्याहृतियाँ और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो विद्या तथा भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं; तथा जो सरस्वती और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो लक्ष्मी एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी

उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो गौरी एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो भगवती जनकनन्दिनी एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो त्रिलोकी—भूः, भुवः और स्वः है, वह सब भी उन्हींका स्वरूप है। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो सूर्यदेव और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो चन्द्रमा एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं; तथा जो नक्षत्रगण एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो नवग्रह और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है॥ १६—३०॥

'ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो आठ लोकपाल और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो आठ वसु और भूः-भुवः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो ग्यारह रुद्र और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो बारह आदित्य और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो भूत, वर्तमान और भविष्यकाल एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो विराट् परमेश्वर इस ब्रह्माण्डके भीतर-बाहर व्याप्त हैं, वे और भूः आदि तीनों लोक भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा) और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो प्रकृति एवं **भूः-भुवः** आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो ॐकार और भूः-भुवः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो चार अर्धमात्राएँ और भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो परम पुरुष एवं **भूः-भुवः** आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं; तथा जो महेश्वर और **भूः-भुवः-स्वः**—तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो

महादेव एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो '**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**' इस द्वादशाक्षर-मन्त्रसे नमस्कार करनेयोग्य महाविष्णु एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो परमात्मा एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो विज्ञानात्मा एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ जो सुप्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे अवश्य ही भगवान् हैं तथा जो सच्चिदानन्दैक-रसात्मा एवं भूः आदि तीनों लोक हैं, वे भी उन्हींके स्वरूप हैं। उन भगवान् श्रीरामको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है'॥ ३१—४७॥

जो ब्रह्मवेत्ता इन (मन्त्रराजके ४७ अक्षरोंके अनुसार) सैंतालीस मन्त्रोंसे प्रतिदिन भगवान् श्रीरामका स्तवन करता है, उसके ऊपर इस स्तुतिसे भगवान् प्रसन्न होते हैं। अतः जो इन मन्त्रोंसे प्रतिदिन भगवान्‌की स्तुति करता है, वह भगवान्‌का प्रत्यक्ष दर्शन करता है; वह अमृतत्वको प्राप्त होता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है॥ ५॥

तदनन्तर, भरद्वाजने याज्ञवल्क्यकी सेवामें उपस्थित होकर प्रार्थना की—'भगवन्! श्रीराम-मन्त्रराजके माहात्म्यका वर्णन कीजिये।'

तब उन प्रसिद्ध महात्मा याज्ञवल्क्यने कहा—

स्वयंप्रकाश, परम ज्योतिर्मय तथा केवल अपने ही अनुभवद्वारा गम्य अद्वितीय चिन्मात्रस्वरूप जो परमात्मा है, वही श्रीरामचन्द्रजीके षडक्षर-मन्त्रका प्रथम अक्षर ('**रां**' बीज) माना गया है। मन्त्रका मध्यभाग जो '**रामाय**' पद है, वह अखण्डैकरसानन्दस्वरूप तारक ब्रह्मका वाचक है; उसे सच्चिदानन्दस्वरूप ही समझना चाहिये। मन्त्रका अन्तिम भाग जो '**नमः**' पद है, उसे भी पूर्णानन्दैकविग्रह परमात्मस्वरूप ही जानना चाहिये। सम्पूर्ण देवता और मुमुक्षु पुरुष सदा अपने हदयमें उसको नमन करते रहते हैं।

जो श्रीरामचन्द्रके इस षडक्षर मन्त्रराज ('**रां रामाय नमः**')-का प्रतिदिन नियमपूर्वक जप करता है, वह अग्निमें तपाकर शुद्ध किया हुआ हो जाता है। वह वायु, सूर्य, चन्द्रमा, ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र देवताके द्वारा भी पवित्र कर दिया जाता है। वह सम्पूर्ण देवताओंके द्वारा 'ब्रह्मवेत्ता' रूपसे ज्ञात होता है। वह मानो सम्पूर्ण यज्ञोंके द्वारा भगवान्‌का यजन कर लेता है। उसके द्वारा इतिहास-पुराणोंका तथा रुद्र-मन्त्रोंका लक्ष बार जप सम्पन्न हो जाता है और उसका फल भी उसे मिलता है। प्रणवका तो मानो वह सौ अरब जप कर लेता है। वह अपने पूर्वकी तथा भावी दस-दस पीढ़ियोंको पवित्र कर देता है। वह (समस्त पापोंसे छूटकर) पङ्क्ति-पावन बन जाता है। वह महान् हो जाता है और वह अमृतत्वको प्राप्त होता है।

॥ अथर्ववेदीय श्रीरामोत्तरतापनीयोपनिषद् समाप्त॥

शान्तिपाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!